साहित्य बाल-मनोरञ्जन

—चौथी श्रेणी के लिये

पटना डिवीज़न के अस्थायी इन्स्पेक्टर आफ़ स्कूल्स,
राय साहब कमला प्रसाद बी. ए., एल. टी.
द्वारा रचित

मैकमिलन ऐण्ड कम्पनी, लिमिटेड
कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, लण्डन
१९२९

PRINTED BY N. MUKHERJEE.
AT THE BASANTI PRESS
71, SASHI BHUSAN DEY STREET, CALCUTTA.

भूमिका ।

आज से कुछ ही समय पहले साहित्य बाल-मनोरञ्जन का प्रकाशन हुआ था जिसका प्रथम भाग बिहार-उड़ीसे की प्राइमरी पाठशालाओं के तीसरे स्टैण्डर्ड का पाठ्य ग्रन्थ था। इधर शिक्षा-विभाग के अधिकारियों ने पाठ्यसूची [सिलेबस] में बहुत कुछ परिवर्त्तन कर डाला है जिससे पहले की प्रकाशित पुस्तकें आज उसके अनुकूल नहीं है। यही कारण है, कि इस पुस्तक में बहुत कुछ परिवर्त्तन कर एवं उसे ठीक ठीक पाठ्य क्रम के अनुकूल बनाकर संशोधित एवं परिवर्द्धित रूप में बालकों के सामने उपस्थित किया गया है। अब इस संस्करण की उपयोगिता पहले की अपेक्षा बहुत अधिक बढ़ गयी है।

ग्रन्थकार।

सूची-पत्र ।

विषय			पृष्ठ
१	बालविनय (पद्य)	... ...	१
२	हाथी और सियार (गद्य)	... ...	३
३	कमबुद्धिमान राजा (गद्य)	... ...	६
४	विदुर-नीति (पद्य)	... ...	११
५	जैसे को तैसा (गद्य)	... ...	१२
६	बहरामजी मालाबारी (गद्य)	... ...	१५
७	एक विचित्र कहानी (गद्य)	... ...	१८
८	अशोक (गद्य)	... ...	२२
९	गिरधरकी कुण्डलिया (पद्य)	... ...	२५
१०	वाल्मीकि ऋषि (गद्य)	... ...	२७
११	महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर (गद्य)	... ...	२९
१२	बुढ़िया और उसका पति (गद्य)	... ...	३३
१३	रहीम के दोहे (पद्य)	... ...	३७
१४	उत्तम उपाय (गद्य	... ...	३८
१५	तोते की कृतघ्नता (पद्य)	... ...	४१
१६	दो बिल्लियाँ और बन्दर (गद्य)	... ...	४४
१७	तुलसीदास के दोहे (पद्य)	... ...	४७
१८	बादशाह जहाँगीर का न्याय (गद्य)	... ...	४९

विषय पृष्ठ

१९ रावर्ट क्लाईव (गद्य) ५१
२० मित्रता (गद्य) ५५
२१ तुलसीदास (गद्य) ५८
२२ ध्रुव (गद्य) ६१
२३ दिनोंका फेर (गद्य) ६६
२४ रजिया बेगम (गद्य) ७०
२५ हनुमानजी का लङ्का में जाना (पद्य) ... ७३
२६ सिंह (गद्य) ७७
२७ शङ्कराचार्य्य (गद्य) ७९
२८ नारायणदास और उसका पुत्र (गद्य) ... ८२
२९ महाराज पञ्चम जौर्ज (गद्य) ८६
३० वृन्दके दोहे (पद्य) ९०

साहित्य बाल-मनोरञ्जन

१ ला भाग—४थी श्रेणी

बाल-विनय ।



संकटमोचन=दुख दूर करनेवाले । अज्ञानी—मूर्ख ।

हे ईश्वर ! सब जगके कर्त्ता
तुमको सीस नवाते हैं ।
नित्य निरञ्जन शंकट मोचन
तुम्हें लोग बतलाते हैं ॥१॥
हम बालक अति अज्ञ अहैं प्रभु
विद्या बल औ ज्ञान नहीं
भवसागर में डूब रहे हैं
मिलता हमें न थाह कहीं ॥२॥
दीनबन्धु है नाम तुम्हारा
तो दुख क्यों नहिं हरते हो ।
पल पलमें हम दुख पाते
क्यों नहिं मन में गुनते हो ॥३॥

बालकगन अज्ञानी हैं प्रभु
उन्हें राह पर ले आओ।
आलस लोभ कभी न सतावे
शिक्षा दे तुम बतलाओ ॥४॥
पढ़ि चरित्र प्रह्लाद नाथ ! हम
यही ज्ञान उर धरते हैं ।
बालक पर अति कृपा आपकी
रहती है, दुख हरते हैं ॥५॥
हम हैं शरण तुम्हारी आये
हे प्रभु ! मुझको अपनाओ।
नीति धर्म्म सच्चा सिखलाकर
प्रेम बीज उर उपजाओ ॥६॥
मन कुपन्थ में कभी न जावे
रखें सदा सज्जन शुभ संग।
बन्धु भाव हम रखें परस्पर
बर दे कर दुख कर दो भंग ॥७॥
कहाँ कहाँ लौं अवगुण अपना
हम सब बहु दुख पाते हैं।
दया करो दुख हरो नाथ ! हम
हाथ जोड़ गुण गाते हैं ॥८॥

जगदीप नारायण ।

प्र०—प्रहलाद कौन थे ?

प्र०—दीनबन्धु से क्या समझते हो ?

व्याकरण—"मोहन पढ़ता है" "घोड़ा दौड़ रहा है' और "यह आम बड़ा मीठा है' इन तीनों में से हर एक पूरी बात होने से वाक्य है। इस लिये किसी आदमी जानवर चीज या चाहे जो कुछ भी हो उसके बारे में कोई पूरी बात कही जाय, तो उसको "वाक्य" कहते हैं।

अभ्यास—ऊपर के तीनों वाक्यों में से हर एक के ऐसे पांच-पांच वाक्य बनाओ।

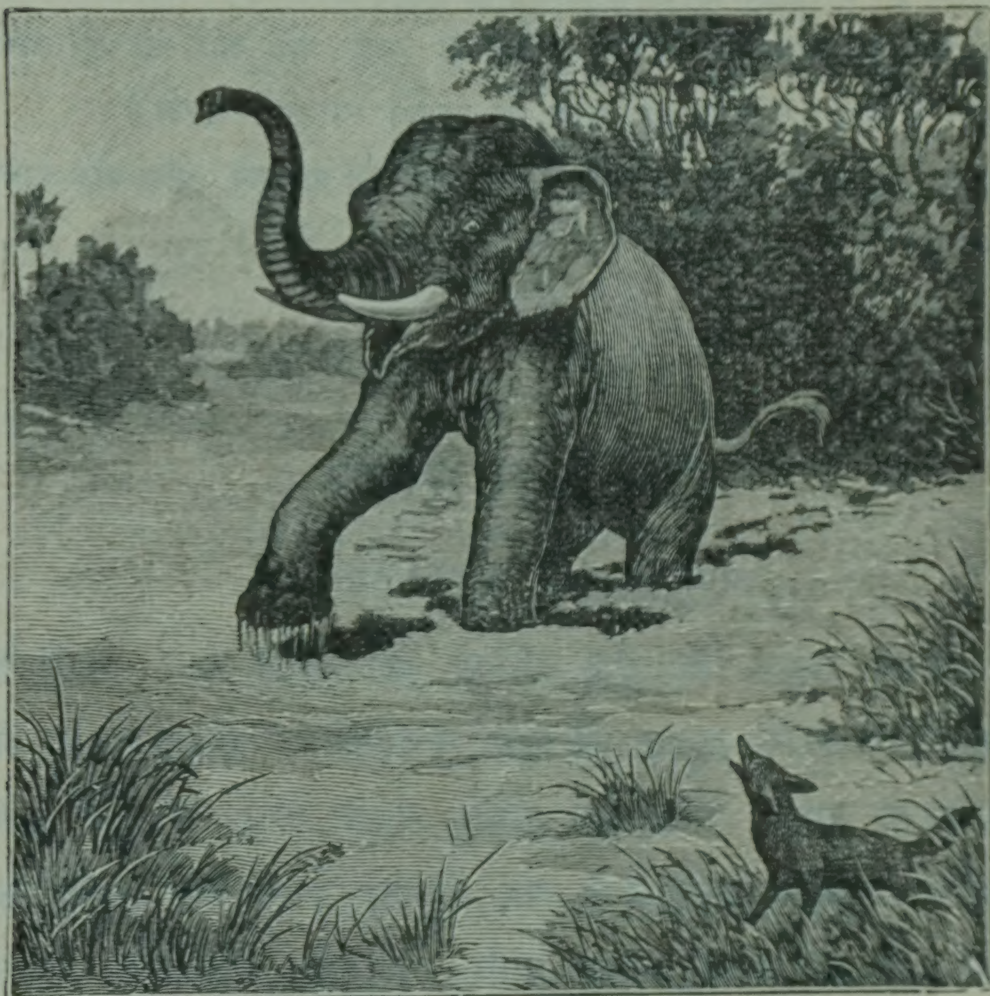
हाथी और सियार।

आग्रह=हठ। प्रस्तुत=तैयार।

किसी जङ्गल में कुछ गीदड़ रहा करते थे। उसी के समीपवाले दूसरे जङ्गल में एक मन्दतिलक नामक हाथी भी रहा करता था। उसे खूब मोटा ताजा देख गीदड़ों तथा अन्य कई हिंसक जन्तुओं ने यह विचार किया कि यदि यह हाथी किसी प्रकार मारा जाय तो कई दिनोंका भोजन अनायास ही मिल जायगा।

ऐसा विचार कर उन सबों ने यह बुरा काम करने के लिये एक बृद्ध सियार से कहा। सियार यद्यपि पहले ऐसा करने के लिये तैयार नहीं हुआ, तथापि कई बार उन सबों के आग्रह करने पर पीछे सहमत हो गया।

कुछ सोच समझकर उस हाथीके निकट जा उस बृद्ध सियारने प्रणाम किया। हाथी ने उसे देख कर कहा कि अरे! तू कौन है ? तुम्हारा इस स्थान पर आना क्योंकर



हाथी और सियार।

हुआ ? सियार ने हाथी की बातें सुनकर कहा,—"हे देव! मैं आपका एक सेवक हूं। मुझे वन के जन्तुओंने आप के पास आपको अपना राजा बनाने के लिये भेजा है और उन सबोंने कहा है कि प्रजा राजा के बिना शोभा नहीं पाती।

राजाके रहने से प्रजा को किसी प्रकार का भी भय और दुःख नहीं होता। इस हेतु हे स्वामी! आप कृपा कर वहाँ शीघ्र चलिये। भले काम में देर करना उचित नहीं।"

वृद्ध सियार की बात सुनकर राजपद के लोभ से उस हाथी ने वहाँ जाना स्थिर कर लिया और उसके साथ धीरे-धीरे चला, आगे-आगे सियार और पीछे-पीछे हाथी।

वृद्ध सियार हाथी को वन के एक ऐसे मार्ग से ले चला जिस में वर्षा के कारण अत्यन्त पङ्क हो गया था।

जब हाथी रास्ते में चलते-चलते पङ्क में फंस गया, तब उस ने सियार से कहा "मित्र सियार! अब मैं किस प्रकार चलूँ। पङ्क के कारण मेरे चारों पैर तो फंस गये।" हाथी की इन बातों को सुन सियार ने उत्तर दिया कि मित्र! सोचने की आवश्यकता नहीं; आप कृपा कर थोड़ी दूर और चले आइये। अब इधर पङ्क नहीं है। हाथी उस की बातों में आकर कुछ दूर और आगे चला आया और जब वह पूर्ण रीति से पङ्क में फंस गया तब उसने पुनः सियार से आगे चलने के लिये अन्य उपाय पूछा। उस धूर्त्त सियारने कहा कि आप अपने मन में किसी प्रकार की चिन्ता न करें। धीरज धारण कर उसी स्थान में खड़े रहें। मैं अपने सथियों को आप की रक्षा करने के लिये बुलाने जाता हूँ।

हाथी उसकी बात मान कर उसी स्थान पर खड़ा रहा, और वह धूर्त्त सियार जङ्गल में जाकर अपने साथियों को बुला

लाया। उन सबोंने इसे बुरी तरह पङ्क में फंसा देखकर उसके शरीर को नोच नोच कर खा डाला।

प्र०—इस कहानी के पढ़ने से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?

प्र०—हाथी की मृत्यु का कारण क्या था?

व्याकरण—दस ऐसे वाक्य कहो जिन में पांच में किसी से पूछा गया हो और पांच में किसी को कुछ करने के लिये कहा गया हो।

एक बुद्धिमान राजा।

निमित्त = लिये, वास्ते। प्रसन्न = आनन्द, खुश। सज्जन – भला आदमी।

किसी समय एक साधु ने किसी राजा को दान करने का उपदेश दिया। उसने यह उपदेश कुछ ऐसे ढंग से दिया कि राजा के हृदय पर वह पूर्णतः बैठ गया और वह उस दिन से दान देने में प्रवृत्त हो गया। अपने राज्य में उसने स्थान-स्थान पर पाठशालायें खुलवा दीं, नहरें कूएं खुदवाये, साधु महात्माओं के निमित्त धर्म्मशालायें जगह जगह पर बनवायीं। मंत्रियों ने देखा कि यदि इसी प्रकार खर्च होता रहा तो शीघ्र ही खज़ाना खाली हो जायगा और देश के प्रबन्ध में बड़ा भारी विघ्न पड़ेगा; इस लिये उन सबों ने मिल कर राजा से कहा,—"हे महाराज! खज़ाने को सुरक्षित रखना आवश्यक है, जिसमें समय

कुसमय जब कोई शत्रु आक्रमण करे तो सेना तैयार की जा सके और देश की रक्षा के लिये मनुष्य नौकर रखे जा सकें।" राजाने उत्तर दिया,—"हमारी सारी दृढ़ता प्रजा की प्रसन्नता में ही है। यदि प्रजा प्रसन्न है तो कोई बाहरी शत्रु हम पर आक्रमण नहीं कर सकेगा। यह धन प्रजा से ही लिया गया है, यह उसी के



एक बुद्धिमान राजा

काम आता है, उसी के लड़के पढ़ाये लिखाये जाते हैं, यदि वह प्रसन्न रहेगी; तो हम को किसी का भी भय नहीं है।"

यह सुन कर मन्त्रिगण चुप हो रहे, परन्तु वे समय समय पर राजा का इस विषय पर ध्यान दिलाते रहते थे। अन्त में राजा ने विवश होकर यह आज्ञा दी कि "यदि कोई इस विषय में फिर

कुछ कहेगा तो मैं उसकी जिह्वा कटवा लूँगा।" अब तो सब मन्त्री घबराये; परन्तु विचारे कर क्या सकते थे, वे ख़ज़ाने को भरपूर रखना ही अपना सब से बड़ा कर्त्तव्य समझते थे; इस लिये परस्पर सलाह कर फिर प्रधान मन्त्री ने कहा कि राजा के सामने तो कोई अब बोल नहीं सकता; तथापि मैं उन्हें एक युक्ति से समझाऊंगा। तब एकबार जब राजा शिकार खेलने के लिये बाहर गया तब उस ने बड़े-बड़े अक्षरों में उस के निवास स्थान में यह लिख दियाः—

चौपाई—धन एकत्र करो चितलाई,
जाते सकल विपद् मिटि जाई।

अर्थात् धन इकट्ठा करो जिससे संसार में सब प्रकार की विपत्तियाँ मिट जाती हैं।

शिकार से लौट आने के पश्चात् जब राजा ने इस चौपाई को पढ़ा तो वह समझ गया कि यह मन्त्रियों का ही कार्य्य है। वे मुख से नहीं बोल सकते तो अब कलम से काम लेने लगे हैं। राजा ने उस के नीचे ऐसा लिख दियाः—

चौपाई—सज्जन जन को जग में भाई,
कबहूं विपद न घेरे आई।

अर्थात् सज्जनों के ऊपर संसार में कभी कोई भी विपत्ति नहीं पड़ती है।

मन्त्रियों ने इसे पढ़ा और समझा कि राजा ने हमारे उपदेश को स्वीकार नहीं किया। दूसरी बार राजा फिर जब कहीं बाहर गया हुआ था तब प्रधान मन्त्री ने साहस कर के इस के नीचे यह लिख दियाः—

चौपाई—विधिवश सज्जन जन के ऊपर,
परत विपद् सुख होवै दूबर।

अर्थात् संयोग से सज्जन पुरुष के ऊपर भी विपद् पड़ जाती है और सुख के सामान छिन जाते हैं।

राजा ने इस को भी पढ़ा। वह अपने मन में सोचने लगा कि यह मन्त्री हम को समझाना चाहते हैं कि राम और युधिष्ठिर की तरह कभी कभी सज्जन पुरुष भी दुःखों में फंस जाते हैं; किन्तु इन अज्ञानियों को यह पता नहीं कि जब बुरा समय आता है तो सब से पहले धन ही नष्ट हो जाता है। देशत्याग से पहले ही युधिष्ठिर सम्पूर्ण धन हार गया था। इसी लिये उसने इस के उत्तर में यह दोहा लिख दियाः—

दोहा—विपद् काल के प्रथम ही,
धन का होत विनाश।
सज्जन जन को चाहिये,
रख ईश पर आश॥

अर्थात् विपद् काल के आने से पहले ही धन का नाश हो जाता है; अतः सज्जन पुरुष को उचित है कि ईश्वर पर विश्वास रख कर शुभ कार्य्य में प्रवृत रहे।

मन्त्रियोंने सोचा कि राजा किसी प्रकार नहीं मानेगा, इस लिये अन्त में सब चुप हो गये। राजा उसी उदारता के साथ अपना काम करता रहा और ईश्वर की दया से उसके जीते जी किसी शत्रु ने उस पर आक्रमण नहीं किया तथा प्रजा हर समय सहायता करनेके लिये तैयार रहती थी। [तत्वदर्शी]

प्र०—राजाने मन्त्री की बातों को क्यों नहीं माना ?

प्र०—ईश्वर पर भरोसा क्यों रखना चाहिये ?

व्याकरण—"लड़के मैदान में" केवल यही इतनी बात भी वाक्य नहीं।

"खेल रहे हैं" केवल यही इतनी बात भी वाक्य नहीं है। पर "लड़के मैदान में खेल रहे हैं" यह इतनी बात वाक्य है, क्योंकि यह पूरी बात है और इस में किसी के बारे में कुछ कहा गया है।

अभ्यास इसमें कौन वाक्य है और कौन नहीं ?

मोहन का कोट काला है। सोहन बड़ा अच्छा। दौड़ रहे हैं मोहन और सोहन। यह दवात काली है।

विदुर-नीति।

द्विज=ब्राह्मण। नृपाल=राजा।

सदा छली सों डरिय जिय, करिय नहीं विश्वास।
ये सर्वस मोचन करत, समय पाय रहि पास॥
करिये विद्यावन्त को, सेवन अरु सहवास।
तासों आवहिं अमित गुण, अवगुन होंहिं विनास॥
सत सङ्गति के बास सों, अवगुन हूँ छिपि जात।
अहिर धाम मदिरा पिवै, दूध जानियै तात॥
असत सङ्गके बास सों, गुन अवगुन ह्वै जात।
दूध पिवै कलवार घर, मदिरा सबहिं बुझात॥
उद्यम कीजे जगतमें, मिलै भाग्य अनुसार।
मोती मिले कि शङ्कर सागर गोता मार॥
धन ते विद्या-धन बड़ा, रहत पास सब काल।
देय जितौ बाढ़ें तितो लेइ न सकैं नृपाल॥
नरपति नसत कुमन्त्र सों, साधु कुसङ्गति पाय।
विनसत सुत अति प्यार सों द्विज बिन पढ़े नसाय॥
जेते जग में मनुज हैं, राखौ सब सों हेत।
को जाने केहि कालमें, विधि काको सङ्ग देत॥

प्र०—विदुर जी कौन थे?
प्र०—अन्तिम दो चरणों का भाव कहो।

व्याकरण—हर वाक्य के दो भाग होते हैं (१) जिसके बारे में कहा जाता है और (२) जो कुछ कहा जाता है।

अभ्यास—नीचे के वाक्यों में दोनों भाग बताओ।

"नदी बहती है। पत्ते हिलते हैं। हवा चल रही है। मोहन का नौकर बीमार है। यह मकान ऊंचा है।"

जैसे को तैसा।

युक्ति=उपाय। अवकाश=समय, छुट्टी।

किसी मनुष्य को बन्दरों के पालने का बड़ा शौक था। वह अपने इच्छानुसार अच्छे अच्छे बन्दरों को खोज कर लाया करता था। किन्तु उनकी उचित सेवा नहीं होनेके कारण वे मर जाया करते थे, जिससे वह अत्यन्त चिन्तित रहा करता था।

एक समय वह किसी जङ्गल में आखेट करने के लिये गया और लौटते समय उसने युक्ति से एक बन्दर पकड़ लिया। उस बन्दर को वह बड़े चाव से पोसने लगा। उसके रहनेके लिये उसने अपने द्वार के समीप ही एक लकड़ी का खम्भा गाड़ दिया था तथा उस बन्दर के गले में रिंग [लोहे की कड़ी लगा] कर रस्सी से उसे बाँध दिया था। रिंग और रस्सी के द्वारा वह बन्दर बड़ी सुगमतासे उस खम्भ के ऊपर आ-जा सकता था।

बन्दर का स्वामी नित्य खाने की वस्तु ला अपने सामने बड़े प्रेम से उसे खिलाया करता था और जब कभी उसे अवकाश नहीं मिलता था तब वह अपने नौकरों द्वारा उसका खाना भेजवा दिया करता था।



जब बन्दर अपना भोजन करने लगता था तब उस समय बहुत से कौए आकर उस का भोजन खा जाया करते थे। जिस से बन्दरको भूखा रहना पड़ता था। एक बार ज्यों हीं उसका खाना आया त्योंहीं बहुत से कौए उसके समीप आ उसे खा गये। इस कारण उस बन्दर को उस दिन विशेष भूखा रहना पड़ा।

एक दिन उस बन्दर ने अपने मन में यह सोचा कि ये दुष्ट पक्षी प्रतिदिन आ कर मेरा खाना खा जाया करते हैं और मुझे भूखा ही रहना पड़ता है; अतएव इनकी दुष्टता रोकने के लिये मुझे कुछ न कुछ उपाय करना चाहिये।

ऐसा विचार कर एक दिन वह अपना भोजन खाने के पूर्व्व ही खम्भे के ऊपरी सिरे पर जा कर चुपचाप बैठ रहा और जब उसका भोजन आया और सब कौए भी आ आ कर उसके भोजन के खाने में लग गये तब धीरे-धीरे उस खम्भे से नीचे उतर मुर्दा सा भूमि पर पड़ रहा जब उस ने देखा कि सब कौए आनन्द से भोजन कर रहे हैं तब उस ने धीरे से उठ फुर्त्ती से एक कौए को पकड़ लिया।

उसकी इस धूर्त्तता को देख सब कौए काँव काँव करने लगे और उस धूर्त्त बन्दर ने उसके शरीर को पकड़ उस के डैने को नोच नोच कर कर फेंक दिया। तब से कौए फिर कभी नहीं आये और बन्दर प्रतिदिन आनन्द से अपना भोजन करने लगा।

प्र०—बन्दर ने कौवों से कैसे बदला लिया?

व्याकरण—इन वाक्यों में बताओ कि किसके बारे में क्या कहा गया है?

लड़के पढ़ते हैं। आकाश के तारे डूब रहे हैं। घोड़े खेतमें चर रहे हैं।

बहरामजी मालावारी ।

अध्यापक = शिक्षक। अद्वितीय = जिसके बराबर कोई दूसरा नहीं हो।

बहरामजी का जन्म सन् १८५३ ईस्वी में हुआ था। इन के पिता एक दफ्तर में किरानी का काम करते थे। जब इन की अवस्था ६ वर्ष की हुई तब उनके पिता का स्वर्गवास हो गया।



बहरामजी मालावारी।

थोड़े दिनों के पश्चात् ये सूरत नगर में विद्याध्ययन करने के लिये भेजे गये। यहाँ इन्होंने दो वर्ष तक विद्या प्राप्त की।

तत्पश्चात् ये गुजराती स्कूल में अपनी मातृभाषा गुजराती सीखने के लिये बाध्य किये गये। जिस विद्यालय में ये पढ़ने के लिये भेजे गये थे उसका अध्यापक एक ब्राह्मण था, जो निःशुल्क [सेंत में] शिक्षा प्रदान किया करता था। किन्तु कभी कभी कुछ अन्नकी सहायता अपने विद्यार्थियों से लेता था। आठ वर्षके उपरान्त ये उसी स्थान के एक दूसरे स्कूल में विद्या प्राप्त करने के लिये भेज दिये गये। इस विद्यालय का अध्यापक बड़े कठोर हृदय का व्यक्ति था। छोटी छोटी अशुद्धियों के लिये भी विद्यार्थियों को कठिन दण्ड दिया करता था।

यद्यपि वह इतने कठोर हृदय का मनुष्य था तथापि इसकी विद्या-बुद्धि बड़ी विलक्षण थी। यहाँ तक कि वह पारसी भाषा का अद्वितीय विद्वान था। इस की अपार दया से बहरामजी ने पारसी भाषा अच्छी तरह से सीख ली। जब इनकी अवस्था १२ वर्ष की हुई तब इन की माता मर गयीं और इन्हें स्वयम् संसार-क्षेत्र में उतरना पड़ा। ये कई विद्यार्थियों को पढ़ा-पढ़ा कर अपना खर्च चलाने लगे। इन की बुद्धि-प्रखरता तथा इन का अति उत्तम आचरण देख कर एक मिशनरी [पादरी] साहब ने जो इनको पहले से भी जानते थे, अङ्गरेजी पढ़ने के लिये हाई इङ्गलिश स्कूल में इन का नाम लिखवा दिया।

ये प्रातः काल से आठ बजे तक दिनमें तथा सन्ध्या काल से

९बजे रात तक अपनी दीनावस्था के कारण नाना प्रकार की कठिनाइयों को सहन करते हुये दूसरे दूसरे लड़कों को पढ़ाया करते थे और अपने आप भी परिश्रम कर अङ्गरेजी पढ़ते थे। इन्हें स्वयम् ही भोजन बनाना, बर्त्तन साफ करना और अन्य कई रसोई सम्बन्धी कार्य्य करने पड़ते थे। पन्द्रह वर्ष पीछे ये बम्बई के एक कालेज में पढ़ने के लिये गये और कुछ समय तक वहाँ पढ़ कर २०) रुपये मासिक वेतन पर अध्यापक का कार्य्य-करने लगे। धीरे धीरे इन्होंने अपना परिश्रम तथा अपनी कार्य्य-कुशलता दिखा कर अपना वेतन ६०) रुपया मासिक करा लिया। उस समय इन्हों ने अन्यान्य लड़कों को भी पढ़ा कर १५०) रुपये की मासिक आमदनी कर ली थी।

इन्हों ने कई पुस्तकें गुजराती भाषा में लिखी हैं। अपने परिश्रम के बल से इन्हों ने "इण्डियन स्पेक्टेटर" नामक एक पत्रिका जारी की थी, जो परिश्रमी भारतवर्ष के लिये एक आदर्श पत्रिका समझी जाती थी।

१ प्र०—बहरामजी की शिक्षा किस प्रकार हुई ?

२ प्र०—बहरामजी के जीवन से हमें किस प्रकार की शिक्षा मिलती है ?

व्याकरण—इन वाक्यों में हर एक के दोनों भाग अलग करोः—

(१) इनके पिता एक दफ़्तर में किरानी का काम करते थे।

(२) ये सूरत नगर में विद्याध्ययन करने के लिये भेजे गये।

एक विचित्र कहानी।

चित्तानुकूल = चित्त के अनुसार। निवेदन = प्रार्थना, विनय।

दिल्ली नगर में गोविन्द नामक एक ब्राम्हण रहता था। उसके दो लड़के थे। उन में एक भोजन-विलासी था अर्थात् खाने की चीज़ों में किसी प्रकार का भी दोष हो तो उसे वह अखाद्य समझ कर कभी नहीं खाता था और दूसरा शयन विलासी था अर्थात् किसी प्रकार की भी कोई बुरी चीज़ शय्या पर हो तो उसे दुःखदायक समझ कर वह उस पर कभी नहीं शयन करता था।

उन दोनों भाइयों की विलासिता की ये बातें उड़ती उड़ती राजा के कानों तक पहुँची। यह सुनते ही वहाँ का राजा बहुत आश्चर्य्यित हुआ और उस ने उन दोनों भाइयों को अपने पास बुलाया और हर एक से पूछा कि तुम लोग किन किन वस्तुओं के विलासी हो? दोनों ने अपना अपना हाल राजा से कह सुनाया।

भोजनविलासी की परीक्षा के निमित्त राजा ने अपने रसोइये को बुला कर नाना प्रकार के स्वादिष्ट भोजन बनाने की आज्ञा दी। रसोइये ने राजा के आज्ञानुसार मिठाई, दूध राबड़ी, पूड़ी, मालपूआ, भात और भाँति भाँति की तरकारियाँ तयार कीं।

तत्पश्चात् राजा के निकट जाकर उस ने निवेदन किया कि महाराज ! सब वस्तुएं तैयार हो गयीं। यह सुनकर राजाने भोजन-बिलासी से कहा कि जा कर आनन्द पूर्व्वक भोजन करो। वह खाने के लिये चौके में तो गया, परन्तु शीघ्र ही वहाँ से बिना भोजन किये ही लौट आया।

राजाने पूछा क्यों जी ! तुम्हारे चित्तानुकूल भोजन तो था ? उसने कहा,—"नहीं, महाराज ! मैंने भोजन नहीं किया।" राजाने आश्चर्य के साथ पूछा,—क्यों ? उस ने कहा,—"महाराज ! भोजन के अन्न से मुर्दे की गन्ध आती थी; जान पड़ता था कि मुर्द-घट्टी के निकटवाले किसी खेत के अन्न से भोजन तैयार करवाया गया है।" राजा ने इस बात को सुनते ही मन में निश्चय कर लिया कि यह एक तरह का पागल है और इसे भोजन के स्वाद की वास्तविक परख नहीं है। ऐसा सोच-विचार कर राजा मन ही मन हंसने लगा। पर कुछ देर के बाद उसने चुपचाप भाण्डारी को बुला कर कहा कि आज तुम अच्छी तरह खोज कराओ कि वह चावल कहां से आया था जिसे तुम ने भोजन बनवाकर उस ब्राम्हण को खाने के लिये दिया था।

भाण्डारी इस बात की जाँच करा कर राजा से निवेदन किया कि अमुक गाँव की मुर्दघट्टी के निकट एक खेत है उसी का यह चावल था। यह सुनते ही राजा बहुत अचम्भे में आ गया और भोजन-विलासी ब्राम्हण को बुला कर

उस ने कहा कि तुम सचमुच भोजन-विलासी हो। ऐसा कह राजा ने उस की बड़ी प्रशंसा की।

तब उसके बाद राजा ने अपने नौकर को आज्ञा दी कि एक सुन्दर महल को अच्छी तरह से शय्या सजवा कर उस पर अच्छे से अच्छे बिछावन आदि बिछा कर उसे ठीक करो। राजा की आज्ञा पाते ही उस नौकर ने अनेक प्रकारके चित्र, माला और फूलदानों में फूल रख एक महल की एक सुन्दर कोठरी को सुसज्जित किया, तत्पश्चात् शय्या पर भाँति भाँति के सुकोमल बिछावन बिछा कर उस पर स्वच्छ चादर डाल दी।

बिछावन बिछा चुकने पर नौकर ने राजा से प्रार्थना की कि महाराज आप के अज्ञानुसार मैंने शय्या सजा कर तैयार की है। राजा ने तब उस शयन-विलासी को बुला कर कहा कि तुम जा कर आनन्दसे उस शय्यापर शयन करो।

वह महल में जा कर ज्यों ही चारपाई पर लेटा त्यों ही उठकर न मालूम क्यों उलटे पैर फिर राजा के सम्मुख आ उपस्थित हुआ। राजा ने देखते ही उस से पूछा,—क्या तुम्हारी नींद इतनी जल्दी पूरी हो गयी? शय्या सजी तो अच्छी थी?" उस ने कहा,—"नहीं महाराज! मैंने शयन ही नहीं किया। बिछावन पर शरीर रखते ही मुझे ज्ञात हो गया कि उसकी सातवीं तह में एक महीन बाल की लट है, जिस से मुझे शयन करने में बहुत कष्ट जान पड़ा और मैं सो न सका।"

राजाने उस की बात सुन उस समय तो उसको बड़ा भारी

मूर्ख समझा पर जब बिछावन में खोजने पर सातवीं तह से एक महीन बाल की लट निकल पड़ी तब तो वह बहुत प्रसन्न हुआ और उसके आश्चर्य्य का ठिकाना न रहा।

फिर दोनों भाइयों को बुलाकर राजा ने उनकी बहुत प्रशंसा की और कहा—"तुम लोग वास्तविक भोजन-विलासी और शयन-विलासी हो ,, ऐसा कह उन लोगों को राजा न बहुतसा धन इमान दे कर उन्हें घर विदा किया।

प्र०—शयनविलासी की किस बात पर राजा को आश्चर्य हुआ ?

व्याकरण—वाक्य का पहला भाग अर्थात् जिसके बारे में कुछ कहा जाता है वह "उद्देश्य" और वाक्य का दूसरा भाग अर्थात् जो कुछ कहा जाता है वह "विधेय,, कहलाता है।

अभ्यास—नीचे के प्रत्येक वाक्य में उद्देश्य और विधेय बतलाओः—वह आता है। हरि खा रहा है। राजेन्द्र की टोपी गोल है। रेल गाड़ी आ रही है। वह भूमि पर बैठा है। कौआ काला होता है।

अशोक ।

प्राचीन = पुराना । सन्तान = लड़का लड़की ।

इस देश के प्राचीन राजाओं में अशोक एक बड़ा नामी राजा था। वह ख्रीष्ट से २६९ वर्ष पूर्व्व अपने राज्य का अधिकारी बना। वह महाराजा चन्द्रगुप्त का पोता और विन्दुसार का पुत्र था। बचपन में वह बड़ा योद्धा, शरमा और कठोर स्वभाव का था।

जब वह राजा हुआ तब उसने कलिङ्ग (उड़ीसा) देश पर विजय प्राप्त करने के लिये या की और उस पर चढ़ाई कर वहां के राजा से युद्ध करना आरम्भ किया। जिस समय वह वैरियोंसे लड़ रहा था, उस समय युद्ध में बहुत से मनुष्यों के मारे जाने के कारण उसके हृदय में दया-भाव उत्पन्न हुआ और शीघ्र ही जीवहिंसा करना छोड़ उस ने बौद्ध-धर्म ग्रहण किया बौद्धधर्म के स्वीकार कर लेने पर वह उस धर्म का बड़ा कट्टर पक्षपाती हो गया।

अब उस ने अपने बौद्ध-धर्म्म के प्रचार के लिये बहुत से उपदेशों को दूर दूर देशों में भेजा। महाराजा अशोक के उद्योग से सब देशों में शीघ्र ही बौद्ध धर्म्म का पूर्ण प्रचार हो गया। यहाँ तक कि धीरे-धीरे सारे भारतवर्ष में इस धर्म्म की पताका फहराने लग गयी।

महाराज अशोक की राजधानी पटना या कुसुमपुर थी।

जिस समय वह अपनी राजधानी में राज्य करता था, उस समय राजधानी की शोभा एक निराले ही ढंग की हो रही थी। प्रजा के उपकार के लिये वह सदा चिन्तित दिखायी देता था। उसने प्रजा की भलाई के लिये कई उत्तमोत्तम कार्य्य किये थे। उसी के प्रबन्ध से स्थान-स्थान में कूएँ, मनुष्य और पशुओं के लिये अस्पताल, धर्म्मशाला और औषधालय बने थे। सड़क की दोनों ओर हरे-भरे वृक्ष लगाये गये थे। प्रजा को अच्छे मार्ग पर चलाने के लिये वह बहुत से गुणवान् मनुष्यों को रख और उनके द्वारा स्थान-स्थान में सभायें स्थापित करा कर लोगों को लाभ पहुँचाया करता था। उन सभाओं में जो मनुष्य अपना गुण दिखाते उन्हें उचित पुरस्कार भी दिया करता था।

इस प्रकार के सुन्दर प्रबन्ध से राज्य की सारी प्रजा सर्व्वदा आनन्दित रहा करती थी। राज्य में चोरी, जुआरी डाकू और लुटेरों आदि का नाम भी न था।

राजा स्वयम् ही सब कामों की देख-भाल अच्छी तरह से किया करता था। वह दीनोंकी प्रार्थना सुनने के लिये हर समय तयार रहता था। उसके जीवन में कभी ऐसा समय नहीं उपस्थित होता था जब कि वह कुछ कुछ प्रजा की भलाई का काम नहीं सोचता हो। उस में सब से उत्तम गुण यह था कि वह राज्य के कामों में कभी चंचल-चित्त नहीं दिखायी पड़ता था।

महाराज अशोक को मरे दो हज़ार वर्ष के कुछ ऊपर हो गये, किन्तु अभीतक उसके शिला [पत्थर] लेख जहाँ तहाँ पाये जाते हैं । कई तरह के स्मारक [चिन्ह] जो पृथ्वी के नीचे गड़े थे आज निकल रहे हैं। उस राजाने बड़ों के प्रति आदर भाव रखना; सन्तान और मित्रोंसे प्रेम; सब जीवों पर दया; क्षमा आदि कई शिक्षायें जहाँ-तहाँ पत्थरों पर खुदवायी थीं; जो अब भी पायी जाती हैं।

प्र०—अशोक ने क्यों बौद्ध धर्म्म स्वीकार किया ?

व्याकरण—नीचे लिखे हुए वाक्यों में से उन वाक्यों को अलग करके लिखो जिन में (अ) उद्देश्य और विधेय दोनोंके लिये एक शब्द हो (ब) दोनों के लिये कई कई शब्द हों (स) उद्देश्य के लिये कई पर विधेय के लिये एक शब्द हो (द) उद्देश्य के लिये एक हो पर विधेय के लिये कई शब्द हों।

यह किताब है। वह घड़ी है। टोपी लाल है। पानी ठण्डा है। आग जलती है। राम की काली गाय खेत में चर रही है। उसका बड़ा भाई अच्छा है। कबूतर अपने घोंसले में है। हरि की किताब का एक पन्ना फटा है। दीवार के चित्र भींगे हैं।

गिरिधर की कुण्डलिया।

प्रफुलित = खिला हुआ। मतौ = राय, बात। बिसराम = सुख।

साईं समय न चूकिये, यथा शक्ति अनुमान।
को जाने को आई हैं, तेरी पौरी प्रमान॥
तेरी पौरी प्रमान, समय असमय तकि आवै।
ताको तू मन खोलि, अंक भरि कंठ लगावै॥
कह गिरिधर कविराय, सबै या में सधि आई।
शीतल जल फल फूल, समैं चूको जनि साईं॥१॥

साईं हरि ऐसी करी बलि के द्वारे जाय।
पहले हाथ पसारि के, बहुरि पसारे पाय॥
बहुरि पसारे पाय, मतौ राजा न बतायो।
भूमि सबै हर लई, बाँधि पाताल पठायो॥
कह गिरिधर कविराय. राय राजन की ताईं।
छल बल करि पर भूमि लेत को त्रिपत्यो साईं॥२॥

साईं हंस न आवहीं बिन सरवर जल पास।
निर्झर तरुवर ते उड़े, पंछी पथिक उदास॥
पंछी पथिक उदास. छाँह विसरायन पावैं।
जहाँ न प्रफुलित कमल, भ्रमर तहँ भूलि न जावैं॥
कह गिरिधर कविराय, जहाँ यह बूझ बड़ाई।
तहाँ न करिये साँझ प्रात ही चलिये साईं॥३॥

साईं अपने चित्त की भूल न कहिये कोय।
तब लग मन में राखिये, जब लग कारज होय॥
जब लग कारज होय, भूल कबहूँ नहिं कहिये।
दुर्जन तातो होय,आप सीरे ह्वै रहिये॥
कह गिरिधर कविराय, बात चतुरनकी ताईं।
करतूती कहि देत, आप कहिये नहिं साईं॥४॥
साईं बैर न कीजिये, गुरु पण्डित कवि यार।
बेटा बनिता पौरिया, यज्ञ करावनहार॥
यज्ञ करावनहार, राजमन्त्री जो होई।
विप्र पड़ोसी वैद, आपको तपै रसोई॥
कह गिरिधर कविराय, जुगन ते यह चलिआई।
इन तेरह सों तरह दिये, बनि आवै साईं॥५॥

प्र०—किन किन से वैर नहीं करना चाहिये?

प्र०—चौथी कुण्डलिया से क्या शिक्षा मिलती है?

व्याकरण—"कुत्ता आ रहा है।" इस वाक्य में कुत्ता "उद्देश्य" का विस्तार या फ़ैलाव नहीं है। पर यदि काला कुत्ता वा मनोहर लाल का काला कुत्ता कहा जाय, तो यह उद्देश्य का विस्तार कहलावेगा। इस लिये किसी वाक्य में जब उद्देश्य के लिये एक से अधिक शब्द हों, तब वह उद्देश्य का विस्तार कहलाता है।

अभ्यास—नीचे के वाक्यों में उद्देश्य का विस्तार करो—बैल खाता है। पानी मीठा है। टोपी हलकी है। किताब फटी है। तारे डूब रहे हैं। धोती सूख रही। यह गोल है।

वाल्मीकि ऋषि ।

तत्पर = तैयार । ज्यों का त्यों = जैसा का तैसा । कर्त्तव्य = काम ।

वाल्मीकि ऋषि पहले व्याधा थे । जङ्गल में रह कर नित्य जीवहिंसा किया करते थे और दूसरों की वस्तुएं अपहरण कर उस से अपने परिवार का भरण-पोषण किया करते थे । जिस दिन ये जङ्गल में रहकर लूट मार नहीं करते उस दिन ये जानते थे कि मैंने आज कुछ भी नहीं किया ।

इस प्रकार के पापमय नीच कार्य्यों के करने से इनका शरीर अत्यन्त कुरूप हो गया था । यहाँ तक कि इन्हें अचानक देख लेने से भय मालूम होता था ।

जिस जङ्गल में ये लूट-मार किया करते थे उसी जङ्गल से होकर एक दिन एक ऋषि जा रहे थे । वाल्मीकि ने औरों की तरह जब अपने नियमानुसार उन्हें भी लूटना चाहा तब उस ऋषि ने इन्हें नीच कार्य्य करने पर तत्पर होते देख कर कहा— "ए व्याधा ! तुम यह नीच कर्म क्यों करता है ? वाल्मीकि ने इन की बात सुन कर उत्तर दिया,—"अपने परिवार के भरण-पोषण के लिये मैं ऐसा कार्य्य किया करता हूँ । तब ऋषि ने इन से पूछा,—भला तुम यह तो बताओ कि इस नीच कर्म के करने से जो पाप होगा उस पाप के भागी

तुम्हारे परिवारवाले होंगे या नहीं? वाल्मीकि ने उत्तर दिया,—"मैं यह नहीं कह सकता कि वे इसके भागी होंगे या नहीं।

इस के बाद उस ऋषि के बहुत समझाने बुझाने पर वाल्मीकि ने अपने घर जाकर अपने परिवारवालों से अपने पाप में भाग लेने के विषय में पूछा। उनके परिवारवालों ने कहा कि हमलोग नहीं जानते कि तुम कौन सा कार्य्य कर हम लोगों का भरण-पोषण किया करते हो। हम लोग कदापि तुम्हारे पाप के भागी नहीं हो सकते।

वाल्मीकि ने लौट कर फिर उस ऋषि से अपने परिवार-वालों की कही हुई बातें ज्यों की त्यों कह सुनायी। तत्पश्चात् उस ऋषि ने इन के ऊपर दया कर और कई प्रकार के उपदेश दे इन्हें दुष्कर्म करने से रोका और वे उन्हीं कई सदुपदेशों को मान, राम का नाम उलटा जप जप कर अर्थात् "मरा मरा कह कर एक बड़े भारी महात्मा हो गये और तभी से वे वाल्मीकि ऋषि कहलाये। * ईश्वर की कृपा और सत्सङ्ग के प्रभाव से इनकी बुद्धि अत्यन्त स्वच्छ हो गयी। कुछ दिनोंके पीछे इन्हों ने ही वाल्मीकि रामायण की रचना की जो अब तक संसार में प्रसिद्ध है और उस रामायण के उपदेशों को ग्रहण कर लोग अत्यन्त लाभ उठाया करते हैं।

---

* इन्हीं के विषय में यह चौपाई प्रसिद्ध है,—उलटा नाम जपत भगवाना, बाल्मीकि भये ब्रह्म समाना।

प्र०—व्याधा किसे कहते हैं ? वाल्मीकि जी ऋषि किस प्रकार बन गये ?

प्र०—"रामायण और ऋषि" इन शब्दों में प्रत्येक से एक एक वाक्य बनाओ।

व्याकरण—उद्देश्यों का विस्तार उसका कोई गुण या उसका किसी दूसरे से कोई सम्बन्ध या उसका कोई काम बताकर किया जाता है। जैसे,—"अच्छे लड़के आ रहे हैं।" "हरिदास बाबू के लड़के आ रहे हैं।" "पढ़नेवाले लड़के आ रहे हैं।"

अभ्यास—इन वाक्यों में तीनों तरह से उद्देश्य का विस्ताररो (१)क। गाय चर रही है। (२) बन्दर बैठे हैं। (३) बाल्मीकि पहले व्याधा थे

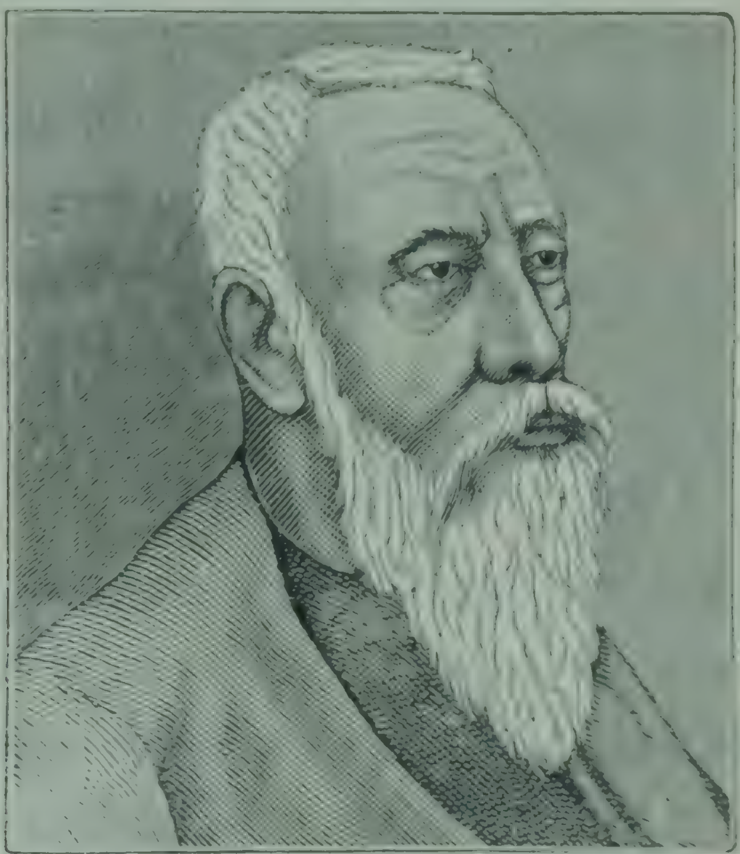
महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर।

उल्लेख = कथन, चर्चा। शुश्रूषा = सेवा, टहल। अवलोकन करना = देखना

महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म सन १८१७ ई० में हुआ था। बाल्यावस्था में आप की दादी ने आप का भरण-पोषण कर उचित शिक्षा भी प्रदान की थी। एक समय जब आप की दादी रोगग्रसित हुई थीं आपने लगातार तीन दिनों तक रात दिन उनके विस्तरे के नीचे बैठ बड़ी सेवा-शुश्रूषा की थी, जिसका उल्लेख आपने अपनी एक पुस्तक में किया है।

जिस समय आप अपनी दादी की सेवा में निमग्न हो अपने प्रेम का परिचय दे रहे थे उस समय आप के मन में एक

नवीन ज्ञान का उदय हुआ था। वह यह था कि अपने जीवन को पवित्रता और सात्विकता से व्यतीत करना मनुष्यमात्र का मुख्य कर्त्तव्य है तथा आप स्वयं भी इन्हीं सब बातों के सोच विचार में रहते थे कि किस प्रकार मैं अपना जीवन धर्म्मपूर्व्वक व्यतीत कर सकता हूँ।



महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर।

एक समय जब आप टहलते हुए अपने मन में यह विचार कर रहे थे कि किस प्रकार मैं अपनी आयु को पवित्रता पूर्व्वक बिताऊं उसी समय काग़ज़ का एक फटा हुआ ऐसा टुकड़ा हवा के वेग से उड़ता हुआ आप के

पास से जा रहा था जिस पर संस्कृत में कुछ लिखा हुआ था। उसे देख कर आपने उठा लिया और ध्यानपूर्वक उसे पढ़ने लगे; किन्तु संस्कृत नहीं जानने के कारण उसके अर्थ और आशय को आप नहीं समझ सके। कुछ देर के बाद आप उस टुकड़े को ले कर एक पण्डित के निकट उपस्थित हुए और उन से पूछने पर आप को ज्ञात हो गया कि उस में उपनिषद् का एक श्लोक लिखा हुआ था जिसका भाव यह था,—ईश्वर प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक स्थान में वर्त्तमान है और केवल उस की भक्ति में ही सच्चा सुख प्राप्त होता है। पाप करना तथा दूसरों की वस्तुओं पर लोभ करना अनुचित है।

इस श्लोक का अर्थ जान लेने पर आप को ऐसा विदित हुआ कि मानो इस समय ईश्वर की यह शिक्षा मुझे अनायास मिली है। सन् १८४६ ई० में आपके पिताका देहान्त हो गया। उन के मरनेके पीछे आपको ज्ञात हुआ कि मेरे पिता एक करोड़ रुपये के ऋणी थे। आपको इस ऋण की बात सुनकर दुख तो अवश्य हुआ किन्तु आप की जायदाद भी कुछ कम न थी। आपने अपने पिता का ऋण चुकाने के लिये अपनी कुल जायदाद महाजनों को दे दी और उन लोगों से अनुरोध किया कि जब तक आप लोगों का ऋण चुक न जाय तब तक इसकी कुल आय आप लोग अपने ही काम में लाया करें।

आपने अपनी घोड़ा गाड़ी और दूसरी दूसरी सम्पत्तियों को भी बेच डाला तथा एक मामूली दरिद्र भिखमंगे की नाईं

जीवन बिताना आरम्भ किया। इन्हीं सब उपायों से कुछ ही वर्षों के पीछे आपका कुल ऋण चुक गया और आपकी जमीन्दारी भी ज्यों की त्यों लौट आयी। आपके हृदय में अभिमान का लेश भी नहीं था। आप सच्चाई और ईमानदारी को बहुत प्यार करते थे और आवश्यकतानुसार दीनों की भरपूर सहायता किया करते थे। आपने इस असार संसार का सन् १९०५ ई० में प्रायः ९० वर्ष की अवस्था में त्याग किया। आपकी मृत्यु का समाचार सुनकर भारत में सर्व्वत्र शोक छा गया था और सब मनुष्यों ने समझ लिया कि आज हम लोगों ने एक सुयोग्य पवित्र और भद्र व्यक्ति को सदा के लिये खो दिया।

प्र०—महर्षि देवेन्द्रनाथ ने अपने पिता का ऋण किस प्रकार चुकाया ?

व्याकरण—"राम आता है।" और "रमेश पढ़ता है।" इन वाक्यों में "आता है" और "पढ़ता है" विधेय हैं। एक एक शब्द होनेके कारण इनका विस्तार नहीं है।

पर यदि ऐसा कहा जाय,—"राम धीरे धीरे आता है" और "रमेश ध्यान देकर पढ़ता है" तो इनमें "आता है" और "पढ़ता है" का विस्तार हो गया और यही विधेय का विस्तार हुआ।

अभ्यास—दस ऐसे वाक्य लिखो जिनमें केवल विधेय का विस्तार हो।

बुढ़िया और उसका पति।

ग्राम=गांव। भिक्षाटन=भीख के लिये घूमना।

किसी ग्राम में एक बुढ़िया और उस का बूढ़ा पति रहता था। दोनों ही अपनी दीन दशा के कारण भिक्षाटन कर अपना समय व्यतीत किया करते थे। बूढ़े का यह नित्य का नियम था कि वह एक राजा के यहाँ भिक्षा के किये जाया करता था। राजा उस बूढ़े की दशा पर विचार कर उसे नित्य कुछ न कुछ अन्नादि दे दिया करता था। बूढ़े को जो कुछ मिल जाता था, उसे ही अपने घर में ला भोजन बनवा स्त्री पुरुष दोनों खा लिया करते थे।

एक दिन बूढ़े की स्त्री को रोटी खाने की इच्छा हुई। अतः उसने अपने स्वामी से अपने मन की बात प्रकट की। बूढ़ा अपनी स्त्री की इच्छा जान अपने नित्य के नियमानुसार राजा के यहाँ अरवा चावल माँगने के लिये गया। राजाने बूढ़े को आया हुआ देख अपने नौकर को उसे कुछ अन्न दे देने के लिये सङ्केत किया। इस पर किसी एक नौकर ने उस बूढ़े को मोटा चावल देना चाहा, किन्तु बूढ़े ने उसे लेना स्वीकार नहीं किया। इसी प्रकार जब कई तरह के चावल उसे दिये जाने लगे तब उसने उन चावलों को भी लेना अस्वीकार कर दिया। अन्त में उस बूढ़े ने आटा लेने की

इच्छा प्रकट की तब नौकर ने उस की इच्छाके अनुसार आटा दे दिया।

बूढ़ा आटा लेकर अपने घर आनन्द पूर्व्वक पहुँचा। उस की स्त्री आटा देखते ही अति प्रसन्न हुई। कुछ देर पीछे उस बूढ़े ने अपनी स्त्री को आटा दे कर कहा कि इस की रोटियाँ बना कर अपनी इच्छा पूरी करो।

जङ्गल से लकड़ी ला कर उस बुढ़िया ने उस आटे की तीन रोटियाँ तैयार कीं और तब वह अपने मनमें विचारने लगी कि मैंने ही परिश्रम कर इन रोटियों को बनाया है इसलिये मैं तीन में से दो रोटियाँ खाऊँगी और एक अपने पति को दूंगी इतने ही में वह बूढ़ा भी कहीं से घूमता हुआ आ पहुँचा और उसने अपनी स्त्री से रोटियों के बनकर तैयार होनेके विषय में पूछा।

बूढ़िया ने रोटियों के तैयार हो जाने और स्वयं दो रोटी खाने की इच्छा उस बूढ़े पर प्रकट की।

इस बात को सुन बूढ़ेने उत्तर दिया कि,—"यह कभी नहीं हो सकता कि तुम दो रोटियाँ खाओ मैं एक ही खाऊँ। वह आटा जिसकी रोटियाँ बनी हैं मैं ही लाया हूँ। अतएव मैं ही दो रोटियाँ खाऊँगा और तुम्हें एक ही रोटी मिलेगी।"

इसी प्रकार कुछ देर तक वाद-विवाद होने के पश्चात् उन दोनों ने यही निश्चय किया कि हम लोग एक एक घरमें जा कर सो रहें और जो सबसे पहले उठेगा वह एक रोटीका अधिकारी होगा और जो सब से पीछे उठेगा वही दो रोटियाँ

खा सकेगा। दोनों अधिक रोटियोंके लोभ में पड़ कर अपने अपने घर में जा कर सो रहे। दो रोटियों की लालच से वे दोनों कई दिनों तक उसी घरमें सोए हुये रह गये। कोई भी पहले इस लिये न उठता था, कि ऐसा होने से उसे एक ही रोटी खाने को मिलेगी।

कुछ दिनोंके बाद उस राजा ने, जिसके यहाँ वह बूढ़ा नित्य भिक्षा मांगने के लिये जाया करता था, अपने नौकरों से पूछा, कि वह बूढ़ा अब भिक्षा माँगनेके लिये क्यों नहीं मेरे पास आता? अपने स्वामी की बात सुन कर नौकरोंने उत्तर दिया कि हे स्वामी! हम लोग नहीं जानते कि वह बूढ़ा क्यों नहीं आता। थोड़ी देर तक सोच विचार कर उस राजाने अपने एक नौकर को उस बूढ़ेका पता लगाने के लिये कहा।

नौकर अपने स्वामी की आज्ञा पा शीघ्र ही उस बूढ़े के घर पर जा पहुँचा और वहाँ उस ने उसे पुकारा; किन्तु किसी की भी आहट न मिलने पर उस ने उस के घर की किवाड़ी खटखटायी और उसे खोल कर देखा कि बूढ़ा और उस की स्त्री दोनों मृतक सा हो दो कोठरियों में पृथक-पृथक् सोए हुए हैं। नौकर ने बहुतेरा प्रयत्न किया कि बूढ़ा उठे; किन्तु उसकी कुछ भी सान गुमान नहीं मिलने पर उसे मरा हुआ जान अपने स्वामी के निकट जाकर उसने कुल ब्योरा कह सुनाया। राजाने उसे यथार्थ में मरा हुआ जान अपने नौकरों को उस का मृतक-संस्कार करने के लिये कह दिया।

उस राजा के नौकर कुछ आदमियों के द्वारा उन दोनों को श्मशान भूमि में उठवा ले गये और उनके शरीर को चिता पर रखकर उस में आग लगवा दी किन्तु तब तक उन दोनों में से कोई भी दो रोटियों के लोभ से नहीं उठा ! जब उन के शरीर पर अग्नि की ज्वाला लपट पड़ी, तब वे दोनों "मैं दो खाऊँगी, मैं दो खाऊँगी" ऐसा कह कर चिल्ला उठे। उस स्थान पर एकत्रित सब मनुष्य इस घटना को देख बहुत ही आश्चर्यित हुए और उन्होंने उन दोनों से ऐसा करने का कारण पूछा। दोनों ने आदिसे अन्त तक अपना सारा वृत्तान्त ज्यों का त्यों कह सुनाया। तत्पश्चात् नौकरों ने राजा से जा कर इनकी सारी बातें कह सुनायीं। राजा भी यह सुनकर बड़ा विस्मित हुआ और उसके हृदय में ऐसी दया उत्पन्न हुई, कि तत्काल उस ने उन दोनों को बुलाकर कुछ धन दे उनकी सारी दरिद्रता दूर कर दी।

प्र०—राजाने उस बुढ़िया और उसके पति के साथ कैसा बर्ताव किया।

व्याकरण—"राम धीरे धीरे खाता है" "राम खेलकर खाता है।"
"राम अपने घर में खाता है।" "राम खेलकर खाता है।"

ऊपर के इन वाक्यों के देखने से मालूम होता है कि विधेय का विस्तार क्रिया का कोई विशेषण कहने से या क्रिया करने का काल स्थान ढंग और कारण इत्यादि बताने से हो जाता है।

अभ्यास—ऊपर बताये ढंग से नीचे के वाक्यों में विधेय का विस्तार करो :—

(१) हरि पढ़ता है। (२) कुत्ता काट रहा है। (३) वह बेंचता है।

रहीम के दोहे ।

बापुरो=बेचारा । भुजंग=सांप । सम्पत्ति=धन, दौलत ।

जे गरीब पर हित करैं, ते रहीम बड़ लोग ।
कहा सुदामा बापुरो, कृष्ण मिताई योग ॥ १ ॥
बड़े दीन को दुख सुनैं, लेत दया उर आनि ।
हरि हाथी सों कब हुतो, कहु रहीम पहिचानि ॥ २ ॥
रहिमन देखि बड़ेन को, लघु न दीजिये डारि ।
जहाँ काम आवै सुई, कहा करै तरवारि ॥ ३ ॥
रहिमन वे नर मरि चुके, जे कहुँ मागनि जाहि ।
उन ते पहले वे मुए, जिन मुख निकसत नाहिं ॥ ४ ॥
जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग ।
चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग ॥ ५ ॥
समय दशा कुल देखि के, सबै करत सनमान ।
रहिमन दीन अनाथ को तुम बिन को भगवान ॥ ६ ॥
रहिमन चुप ह्वै बैठिये, देखि दिनन को फेर ।
जब नीके दिन आइ हैं, बनत न लगि हैं बेर ॥ ७ ॥
बिगरी बात बनै नहीं, लाख करौ किन कोय ।
रहिमन बिगरे दूध को, मथे न माखन होय ॥ ८ ॥

रहिमन यों सुख होत है, बढ़त देखि निज गोत ।
ज्यों बड़री अँखियाँ निरखि, अँखियन को सुख होत ॥९॥
संपति संपति जानि के, सब को सब कोई देत ।
दीनबन्धु बिन दीन को, को रहीम सुधि लेत ॥ १० ॥

प्र०—रहीम कौन थे ?

प्र०—पहले दोहे से क्या शिक्षा मिलती है ?

व्याकरण—इन वाक्यों में उद्देश्य और विधेय दोनों का विस्तार करो—
हथियार तेज है। पेन्सिल लाओ। घोड़ा भागा।

उत्तम उपाय।

अनुसन्धान=खोज। न्यायालय=कचहरी।

एक बार अकबर ने बीरबल से कहा कि तुम में न्याय करने की योग्यता नहीं है नहीं तो तुम न्यायालय के भूषण होते। बीरबल ने उत्तर दिया,—हे महाराज! मनुष्य में सब प्रकार की शक्तियाँ हैं, उन्हें दिखाने के लिये केवल अवसर मिलना चाहिये। यथार्थ में काम करने के ढङ्ग निराले होते हैं। आप की इच्छा हो तो परीक्षा कर के देख लें।

निदान अकबर ने एक जूए का मुकद्दमा बीरबल को सौंपा जिस में तीन मनुष्य अपराधी होकर आये थे। बीरबल ने

सब से पहले इन तीनों को विचार की दृष्टि से देखा और तब तीनों को पृथक् पृथक् दण्ड दिया।

पहले मनुष्य को बीरबल ने केवल क्रोध की दृष्टि से देखा और कहा,—"शोक! ऐसा भलामानुस और ऐसा काम करे!" उस को इतना ही कहकर छोड़ दिया। फिर दूसरे को सम्बोधन करके कहा,—"सोचो तो तुम कैसे बड़े घराने के लड़के हो, यदि आज तुम्हारा पिता जीवित होता तो उस को कैसा दुःख होता। अच्छा जाओ तुम को इस बार क्षमा किया जाता है।" तीसरे मनुष्य के विषय में बीरबल ने यह आज्ञा दी,—"इस को गधे पर चढ़ा कर सम्पूर्ण नगर में घुमाया जाय। इसके लिये यही दण्ड उचित है।"

अकबर इस निराले न्याय को देख कर बहुत चकित हुआ कि एक ही अपराध और उसके लिये पृथक् पृथक् दण्ड परन्तु वह चुप था क्योंकि वह बीरबल को आज्ञा दे चुका था, अकबर उस समय तो कुछ न बोला, परन्तु जब कचहरी बन्द हुई तो बीरबल से पूछने लगा,—"तुमने यह क्या किया। बीरबल ने उत्तर दिया,—"हुजूर मैंने न्याय किया है, यदि आप को विश्वास न हो तो अनुसन्धान करके देख लें।"

अकबर ने अनुसन्धान कराया तो उसे ज्ञात हुआ कि जिस मनुष्य को बीरबल ने केवल क्रोध की दृष्टि से देखा था उसने घर पहुँचते ही लज्जा के मारे आत्मघात कर लिया। दूसरा मनुष्य जिसके साथ कुछ नम्रता का व्यवहार किया गया

था वह अपना माल असबाब ले कर किसी दूसरे नगरको चला गया और उसने शपथ खायी है कि अब कभी घर में जाकर मुख न दिखाऊंगा। परन्तु तीसरे मनुष्य ने जिसे गधे पर चढ़ा कर सारे नगर में घुमाया गया था इस दण्डके पश्चात् भी सन्ध्या के समय खूब शराब पी और मतवाला होकर एक मनुष्य को घायल किया और अब वह कोतवाली में क़ैद है। अकबरने वीरबल की चतुरता की प्रशंसा की और साथ ही यह भी कहा कि प्रचलित अदालत में इस प्रकार दण्ड देना उचित नहीं है।

प्र०—अकबरने क्यों प्रचलित अदालत में इस प्रकार के दण्ड देने से रोका ?

व्यकरण—'वीरबल अकबर बादशाह का मन्त्री था इस वाक्य में अकबर, बादशाह मन्त्री और वीरबल ऐसे शब्द हैं जो किसी न किसीका नाम बताते हैं। इसलिये नाम बताने वाले शब्दों को 'संज्ञा शब्द कहते हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ में जितने मनुष्य या पशुके नाम हों, उनको चुन कर लिखो।

तोते की कृतघ्नता ।

क्षुधा=भूख। प्रस्तुत=तैयार। क्षुधातुर=भूख से व्याकुल।

चन्दनपुर ग्राम में शिवकुमार नाम का एक मनुष्य रहता था। उसने अपने यहाँ एक तोता पाल रखा था। वह उसे बड़े चाव और प्रेम से रखता था। बिना उसे खाना दिये आप कभी भोजन नहीं करता था। तोता भी बराबर अपने स्वामी के दुख से दुखी और सुख से सुखी रहता था।

इसी प्रकार जब बहुत दिन व्यतीत हो गये, तब समय के फेर से शिवकुमार के बुरे दिन आ गये। यहाँ तक कि वह थोड़े ही दिनों में धन-जन-रहित हो गया और भिक्षा माँग-माँग कर अपना समय बिताने लगा। शिवकुमार अपने निज के कष्ट से उतना व्याकुल नहीं होता था, जितना अपने परिवार तथा तोते की अवस्था पर विचार कर दुखी होता था।



एक दिन तोता अत्यन्त क्षुधातुर हो तथा अपने स्वामी का कुसमय विचार कर पिंजरे से निकल कहीं भाग गया।

तोते के भाग जाने से शिवकुमार बहुत दुःखित हुआ किन्तु अपना कुसमय विचार कर चुप चाप रह गया।

जब वह तोता अपने स्वामी को छोड़ अपने जातिवाली चिड़ियों में मिलने के लिये गया तो उस समय उस की नीचता का स्मरण कर अन्यान्य पक्षी उसे अपने निकट से दुर दुराने लगे और उसे देखने मात्र से पाप समझने लगे। अपना ऐसा अपमान देखकर वह तोता अत्यन्त दुःखित हुआ और उसने अपने साथियों से अपने अपमान का कारण भी पूछा। उस की बात सुन कर उन पक्षियों ने उत्तर दिया कि "देखो! जिस स्वामी के यहाँ आज तक तुमने इतने आनन्द से जीवन व्यतीत किया है, अब उसके बुरे दिन आ जाने पर तू उसे छोड़ कर भाग आया है। सो तुम सा और कौन नीच होगा? ऐ तोता! तूने अच्छा काम नहीं किया है। देखो! शास्त्र में लिखा है कि जो दूसरे का उपकार नहीं मानता वह अधम और कृतघ्न गिना जाता है और उसको उत्तम गति नहीं होती!"

उनकी ऐसी बातें सुन वह तोता वहाँ से किसी दूसरी जगह उड़कर चला गया, किन्तु वह जहाँ जाता वहां ही धिक्कार का शब्द सुनता था। कहीं उसे बैठने तक को स्थान नहीं मिलता था। इस प्रकार अपनी दुरावस्था पर विचार कर वह तोता नाना प्रकार से विलाप करने लगा और आत्मघात करने पर प्रस्तुत हो गया। थोड़ी देर पीछे कहीं से उसे यह शब्द

सुनायी पड़ा, कि तुम अपने कर्मों का फल भोग चुका। भविष्य में ऐसा नीच कर्म मत करना। अब तुम उसी जगह पर अपने स्वामी के निकट चले जाओ।

अपने घोर विपत्ति कालमें ऐसा सुन्दर उपदेश सुन कर वह बड़ा विस्मित हुआ और ईश्वर से विनय करने लगा कि हे प्रभो! मैंने यथार्थ में नीचता की थी तथा उसका फल भी मुझे मिल चुका। अब आप मेरे अपराधों को क्षमा कीजिये।

कुछ समय पीछे वह तोता अपने स्वामी के पास चला आया और उसे आया जान उसका स्वामी अत्यन्त प्रसन्न हुआ। ईश्वर की कृपा से थोड़े ही दिन पीछे उसके स्वामी का भी समय पलट गया और वह आनन्द से जीवन व्यतीत करने लगा।

प्र०—कृतज्ञ और कृतघ्न में क्या अन्तर है?

व्याकरण—ऊपर के पाठ में ऐसे संज्ञा-शब्दों को चुनो, जो मनुष्य, ग्राम तथा पक्षी के नाम हों।

दो बिल्लियाँ और बन्दर।

चौकसी = रखवारी। परामर्श = राय, सलाह।

किसी गाँव में कई बिल्लियाँ रहती थीं। उन में दो अत्यन्त चालाक थीं। वे दोनों नित्य किसी के गृह में जातीं और अपने खाने की वस्तुएं खोज लाती थीं।



दो बिल्लियां और बन्दर।

एक दिन उन दोनों बिल्लियों ने आपस में सलाह कर किसी बस्तीमें जा कर चोरी करने का विचार किया। जब रात्रि हो गयी और ग्राम में निस्तब्धता छा गयी तब वे दोनों वहाँ से

चल पड़ीं। उन दोनों बिल्लियों का यह भी काम था कि वे एक एक कर चोरी किया करती थीं। जब एक भीतर जाती तब दूसरी बाहर से चौकसी करती और अधिक चीज़ ढोकर ले जाती थी।

एक दिन वे दोनों बिल्लियाँ एक हलवाई की दुकान में जा घुसीं। एक बाहर दरवाजे पर खड़ी होकर अपने शत्रु की प्रतीक्षा करती रही और दूसरी घर के भीतर जा खाने की वस्तुएँ खोजने लगी। थोड़ी देर पीछे उसे उस घर के एक कोने में कुछ रोटियाँ देख पड़ीं। रोटियों को देख वह अपने मन में अत्यन्त प्रसन्न हुई और धीरे-धीरे दूसरी संगिनी को देने लगी। वह दूसरी बिल्ली रोटियों को ले ले कर एक वृक्ष के नीचे रखने लगी। इसी प्रकार जब प्रायः कुल रोटियाँ उठाकर लायी जा चुकीं, तब वह बिल्ली उस घरमें घुसी हुई अपनी संगिनी की बाट देखने लगी। कुछ देर पीछे वह बिल्ली भी बाकी रोटियाँ ले कर वहाँ जा पहुँची।

जब दोनों बिल्लियाँ उस वृक्षके नीचे इकट्ठी हुईं तब रोटियों की ढेरी को देख वे अत्यन्त प्रसन्न हुईं।

रोटियों की अधिकता देख उन दोनों ने उन्हें बराबर बराबर बाँट लेने का निश्चय किया। अब जब बाँटने की बारी आई, तब कभी चोरी करनेवाली बिल्ली कहती कि मैंने जान हथेली पर रखकर चोरी की है इस हेतु मुझे अधिक रोटियाँ मिलनी चाहिये और कभी रोटी लानेवाली बिल्ली बोलती कि मैंने दो

काम किये हैं इस हेतु मैं ही अधिक रोटियाँ लूँगी। इसी बाद विवाद में दोनों बिल्लियाँ खूँ खूँ की विकट ध्वनि कर आपस में लड़ने लगीं। इन के झगड़े को उस बृक्ष पर बैठा हुआ एक बन्दर देख रहा था जब उसने देख लिया कि अब ये दोनों लड़ते लड़ते थक गयीं तब वह उस बृक्ष से धीरे-धीरे नीचे उतर भूमिपर बैठ कर बोला, कि झगड़ने की आवश्यकता नहीं, लाओ मैं हाकिम बन कर तुम दोनों का न्याय कर देता हूँ।

बन्दर की बात सुन कर बिल्लियों ने कहा,—"ठीक है न्याय ही होने से बनेगा।" आइये आप कृपा कर न्याय कर दीजिये। बस इतना कहना था कि बन्दर ने झट एक तराजू ले कुल रोटियों को दो भागों में बाँट उन्हें तराजू के दोनों पलड़ों पर रख कर तौलने लगा।

पलड़े पर रखते ही रोटियों के दोनों हिस्से घट-बढ़ होने लगे। जिस ओर का बोझ अधिक होता, बन्दर झट उससे थोड़ा काटकर खा जाता। ऐसा करते करते वह प्रायः कुल की कुल रोटियाँ खा गया।

जब दोनों पलड़ों में एक-एक रोटी बच गयी तब बिल्लियों ने बन्दर की धूर्त्तता देख कर कहा हम सब न्याय कराने से भर पाये। कृपा कर आप हमारी बची हुई रोटियों को दे दें। बन्दर उनकी बातें सुन कर बोला, ठहरो! घबराने की कोई बात नहीं। मैंने परिश्रम कर तुम दोनों का जो न्याय किया है तुम लोग मुझे उसका मेहनताना क्या देती हो?

इतना कहते ही बन्दर ने बाकी बची हुई रोटियों को भी मुंह में डाल अपनी इच्छा पूरी की और बिल्लियां पीछे मन ही मन पछता कर रह गयीं।

१ प्र०—झगड़ा करना क्यों बुरा है?

२ प्र०—चौकसी और मार्ग इन शब्दों से दो पृथक् पृथक् वाक्य बनाओ?

३ प्र०—इस पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?

व्याकरण—ऊपर के पाठ की अन्तिम २० सतर में संज्ञा शब्दों को चुनो।

तुलसीदास के दोहे।

परिहरु=छोड़ो। शशि=चन्द्रमा।

तुलसी मीठे बचन ते, सुख उपजत चहुँ ओर।
बशीकरन यह मन्त्र है, परिहरु बचन कठोर॥
तब लगि योगी जगतगुरु, जब लगि रहे निरास।
जब आशा मन में जगी, जग गुरु योगी दास॥
तुलसी संत सुअंब तरु, फूलि फलहिं पर हेत।
इतते ये पाहन हनें, उतते वे फल देत॥
तुलसी बिनु गुरु को लखे, बर्त्तमान विपरीत।
कहु केहि कारण ते भयो, सूर उष्ण शशि शीत॥
नैन दोष निज कहत नहिं, विविध बनावत बात।
सहत जानि तुलसी बिपति, तदपि न नेक लजात॥

नीच निचाई नहिं तजै, जो पावै सत सङ्ग ।
तुलसी चन्दन विटप बसि, विष नहिं तजै भुजङ्ग ॥
तुलसी मीठे समयते, माँगि मिलै जो मीच ।
सुधा सुधाकर समय बिन, कालकूट ते नीच ॥
तुलसी जे कीरति चहैं, पर कीरति को खोइ ।
तिन के मुंह मसि लागि हैं, मुए न मिटि हैं धोइ ॥
तुलसी काया खेत है, मनसा भयो किसान ।
पाप पुण्य दोउ बीज हैं, बुवै सो लुनै निदान ॥
अर्ब खर्ब लौं द्रव्य है, उदय अस्त लौं राज ।
तुलसी जो निज मरण है, तो आवै केहि काज ॥

१ प्र०—कीरति का शुद्ध शब्द क्या है ?

२ प्र०—वशीकरण मन्त्र क्या है ?

व्याकरण—ऊपर के पाठ के पहले तीन पद्यों में जो संज्ञा-शब्द हों उन्हें चुनो ।

बादशाह जहांगीर का न्याय।

जब अकबर बादशाह सन् १६०५ ईस्वी में मर गया तब उसका प्रियपुत्र जहाँगीर उसके राज-सिंहासन का स्वामी हुआ। यह बादशाह अपने पिता की भाँत्ति प्रत्येक काम के लिये



जहाँगीर

चतुर और साहसी तो नहीं था, तथापि इसके न्याय-सम्बन्धी कार्य्य अत्यन्त सराहनीय थे। इस की यह प्रतिज्ञा थी कि चाहे मैं कामों की कैसी हू भीड़ में कहीं भी क्यों न रहूं पर प्रजा की प्रार्थना सुनने की अवश्य ही चेष्टा करूंगा।

इसी नियमानुसार इसने अपने शयन करनेवाले महल में दीनों की दशा जानने और सुनने के लिये एक सोने की घण्टी सिकड़ी में बंधवा दी थी जिसका सिरा महल के बाहर लटकता रहता था। जब कभी कोई दीन या अन्य निवेदनकर्त्ता उसे हिला देता तब बादशाह उस घण्टी की आवाज़ सुन कर शीघ्र ही उस मनुष्य की प्रार्थना सुनने के लिये वहाँ पहुँच जाता था।

एक समय किसी मनुष्य का घोड़ा रात्रि के समय बादशाह के महल के समीप ही घास चर रहा था। संयोग वश घोड़ा वहां चला गया और उसका कोई अंग उस सिकड़ी में लग गया जिस से घण्टी का शब्द भीतर बादशाह को सुन पड़ा। बादशाह शब्द सुनते ही बाहर आया और वहाँ किसी को न देख उसने घोड़े को सिकड़ी के पास चरता हुआ देखकर अपने मन में सोचा कि ज्ञात होता है कि यह जिस व्यक्ति का घोड़ा है वह इसे उदर भर भोजन नहीं देता। इस हेतु घोड़े ने इसी दुःख के कारण इस स्थान में आकर अपनी दीन दशा के सम्बन्ध में मुझसे निवेदन किया है।

राजा ने उसी समय घोड़े की दीनावस्था और प्रार्थना पर विचार कर और उसे वहीं बँधवा कर खाने के लिये घास दिलवा दी और वह आप महल में जाकर सो रहा। प्रातःकाल होते ही बादशाह ने उस घोड़े के स्वामी की खोज की। पता लगाने पर उसने उसे बुलवा कर पूछा कि तुम इस घोड़े को उमर भर भोजन क्यों नहीं देते? जब यह घोड़ा युवा और बली था, उस

समय तो तुमने इस से अच्छी तरह काम लिया पर जब इस की वृद्धावस्था आ पहुँची है तब तुम इसे भरपेट खाना भी नहीं देते। ऐसा करना नितान्त अनुचित है। भविष्य में ऐसा करने पर तुम्हें दण्ड दिया जायगा।

राजा की ये न्यायभरी बात सुन कर उस स्थान में सभी राज्यकर्मचारी उसकी बुद्धि की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे।

प्र०—बादशाह ने घोड़े के स्वामी को क्यों बुलाया ?

व्याकरण—"जब अकबर मर गया तब उसका प्रिय पुत्र सिंहासन का स्वामी हुआ" इस वाक्य में 'उस का' शब्द अकबर के बदले में बोला गया है। इस लिये ऐसे शब्दों को जो संज्ञाओं के बदले में बोले जाते हैं "सर्व्वनाम" कहते हैं।

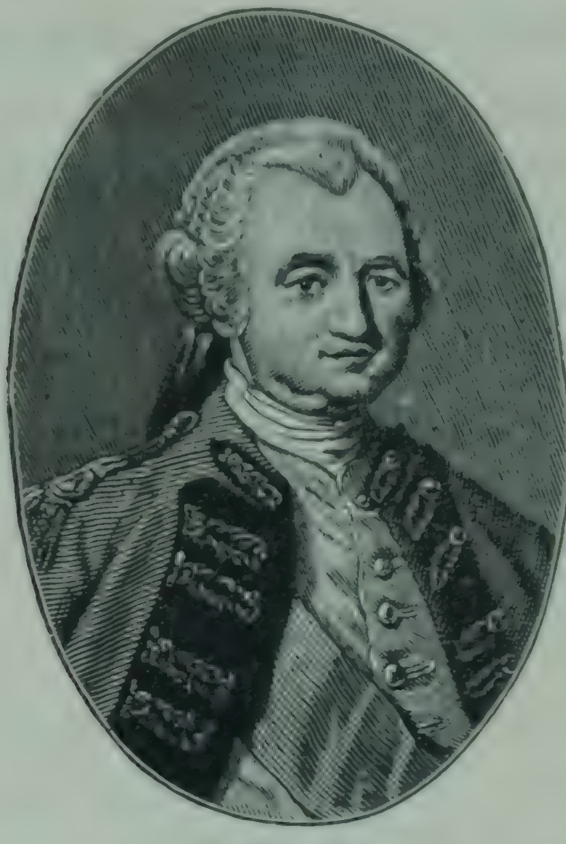
अभ्यास—ऊपर के पाठ की पहली बारह पंक्तियों में ढूंढ़ो कि कौन शब्द किस शब्द के बदले में बोला गया है।

रावर्ट क्लाइव।

निपुणाई=चतुराई। कार्य्य=काम।

इङ्गलैण्ड के शार्पशायर नामक जिले में सन् १७२५ ईस्वी में क्लाइव का जन्म हुआ था। यह बाल्यावस्था से ही नाना प्रकार का उपद्रव किया करता था। इसका स्वभाव अत्यन्त चञ्चल था। इसके माता पिता ने पढ़ाने के लिये स्कूल में

इसका नाम लिखवा दिया था। किन्तु स्कूल में यह मन लगा कर नहीं पढ़ता था। सदैव अन्य अन्य बालकों के साथ खेल किया करता था। यहाँ तक कि जिस स्कूल में यह पढ़ता था उस स्कूल-की दरीचियों को भी तोड़ फोड़ कर टुकड़े टुकड़े कर डालता था।



रार्बट क्लाइव।

यह जिस समय किसी दुकानदार की दुकान पर जाता उस समय वहाँ के लोग इसके आचरण से भय-भीत हो जाया करते थे। एक दिन इसके माता पिता ने इस के कर्मों से क्रुद्ध होकर इसको भारतवर्ष में नौकरी करने के लिये भेज दिया।

जब क्लाइव की अवस्था १७ वर्ष की थी तब यह भारतवर्ष में पहले पहल किरानी के पद पर नियुक्त होकर आया था। कुछ दिनों तक इसने यह कार्य्य किया पर अन्तमें इसे यह अच्छा नहीं लगने लगा।

उसी समय भारतवर्षमें अङ्गरेजों और फ्रान्सीसियोंके बीच लड़ाई हो रही थी। क्लाइव ने उस लड़ाई में अपनी अद्भुत वीरता का परिचय दिया। इसके साहस भरे कामों को देखकर मद्रास के गवर्नर ने इसे एक छोटी सी सेना का नायक बना दिया। यह पद पाकर क्लाइव अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

क्लाइव सदा निडर भाव से रहता था। अपनी सेना को प्रसन्न रखने में यह अद्वितीय था। फौजी लोग भी इसे अत्यन्त आदर की दृष्टि से देखते थे।

कुछ समय पीछे क्लाइव ने अपनी आश्चर्य्य जनक वीरता प्रकट कर अपनी सेनाओं द्वारा कई लड़ाइयों में सफलता प्राप्त की। इसने चन्दा साहब से त्रिचनापल्ली लेकर मुहम्मद अली को दे दिया था।

थोड़े दिनों के बाद यह अपने कामों से अवकाश लेकर इङ्गलैण्ड गया। वहाँ के लोगों ने इसकी वीरता की कहानियाँ सुनकर अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की। इसकी बहादुरी से प्रसन्न हो कर ईष्ट-इण्डिया कम्पनी ने इसे ५००) रुपये की एक तलवार पुरस्कार में दी और सेना का कप्तान बना कर फिर इसे भारतवर्ष को भेज दिया।

जब क्लाइव सेना का मालिक हो कर भारतवर्षमें आया तब इस का बल पौरुष पहले से दूना बढ़ गया। इसने थोड़े ही दिनों में प्लासी नामक स्थान में नवाब सिराजुद्दौला को हराया। इसके अतिरिक्त कई जगहों पर इसने अनेक वीरों को परास्त किया। अन्त में क्लाइव अपनी विद्या बुद्धि की चतुराई के कारण भारतवर्ष में बहुत प्रसिद्ध हो गया। इन सब कामों को समाप्त कर सन् १७६७ ई० मे भारतवर्ष से सदा के लिये विदा हुआ और सन् १७७४ ई० में इङ्गलैण्ड में उसका देहान्त हो गया।

१ प्र०—क्लाइव की वीरता का परिचय दो ?

२ प्र०—क्लाइव से इसकी सेनाएँ, क्यों प्रसन्न रहती थीं ?

३ प्र०—क्लाइव ने किस प्रकार अपनी उन्नति की थी ?

व्याकरण--मैं और हम तू और तुम, वह और वे ये छः शब्द सर्वनाम कहे जाते हैं और इनके रूप बदलते रहते हैं। जैसे—मैं का मुझ और मेरा, तू का तुझ और तेरा, वह का उस, हम का हमारा, तुम का तुम्हारा, और ये का उन।

अभ्यास—ऊपर के पाठ में इन छः सर्व नामों को ढूंढ़ो।

मित्रता ।

अभाव=कमी। भरमार=अधिकता। अधुनिक=आज कलका।

सच्चा मित्र वही है जो विपत्ति में काम आवे। आजकल की रीति के अनुसार सब कोई एक दूसरे को मित्र कहते या मानते हैं। किन्तु वे मित्र तभी तक कहे जा सकते अथवा माने जा सकते हैं जब तक गाँठ में रुपयों की भरमार है। जहाँ उसका अभाव हुआ कि वे शीघ्र ही दूर भाग जाते हैं। जो लोग झूठी-प्रशंसा करके अपने को दूसरों का मित्र कहते हैं वे यथार्थ मित्र नहीं हैं। जो लोग बड़ी बड़ी डींगें मार कर दूसरों को मित्र बताते हैं उनका विश्वास कदापि नहीं करना चाहिये।

आजकल केवल मीठी मीठी बातें कहकर लोगों ने एक दूसरे को अनायास मित्र बना लेना सीख लिया है। परन्तु सच्चा मित्र वही है जो वीरों के सदृश दुःख में अपना प्राण देकर उसकी रक्षा करे।

आज तो लोग अपने मित्र से गले बाँध कर चलते हुए दिखायी पड़ते हैं कल वही अपने मित्र को पैनी कटार ले मार डालने के लिये प्रस्तुत देखे जाते हैं। क्या ऐसे ही मित्रको मित्र कह सकते हैं ? कदापि नहीं, इनको मित्र नहीं वरन् शत्रु कहना चाहिये।

थोड़ी देर तक मर्य्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्रजी और कृष्णचन्द्रजी की जीवनी का स्मरण किया जाय तो स्पष्ट विदित हो जायगा कि उन लोगों ने किस प्रकार अपने मित्रोंका उद्धार किया था। कहाँ बेचारा जंगली सुग्रीव और कहाँ रामचंद्र-जी? कहाँ दीन-दरिद्र सुदामा और कहाँ कृष्णचन्द्रजी? जिस समय कृष्णचन्द्रजी और सुदामा की अवस्था पर विचर किया जाता है उस समय आँखों से आँसू कि धारा बहने लगती है।

सुदामाने बाल्यावस्था में गुरुके यहाँ श्रीकृष्ण भगवान् के साथ कपट भी किया था पर कृष्णजी ने उनके ऊपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। जिस समय दीन सुदामा अपनी अत्यन्त दरिद्रता के कारण श्रीकृष्णजी के द्वार पर गया उस समय उन्हों ने किस प्रकार उसके साथ व्यवहार किया था? सुदामा को देखते ही भगवान् कृष्णचन्द्रजी अपने उच्च सिंहासन से उतरकर अपने मित्र से जा मिले। उन्होंने अपनी आँखों के आँसुओं से उनके पैर धो डाले और तनिक भी अपने मन में अहङ्कार नहीं किया। क्या उन श्रीरामजी और कृष्णजी के समान हमलोगों की बुद्धि हो सकती है? देखो मर्य्यादापुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्रजी ने मित्र के विषय में क्या कहा है—

"जे न मित्र दुख होहिं दुखारी।
तिनहिं बिलोकत पातक भारी॥
निज दुख गिरि सम रज करि जाना।
मित्र के दुख रज मेरु समाना।

जिनके अस मति सहज न आई ।
ते शठ हठि कत करत मिताई ॥
कुपंथ निवारि सुपंथ चलावा ।
गुन प्रकटे अवगुनहिं दुरावा ॥
देतलेत मन शंक न धरई ।
बल अनुमान सदा हित करई ॥
विपति-काल कर शत गुन नेहा ।
श्रुति कह संत मित्र गुन एहा ॥
आगे कह मृदु बचन बनाई ।
पाछे अनहित मन कुटिलाई ॥
जाकर चित अहि-गति सम भाई ।
अस कुमित्र परिहरे भलाई ॥
सेवक शठ नृप कृपण कुनारी ।
कपटी मित्र शूल सम चारी"

१ प्र०—मित्र का लक्षण क्या है ?

२ प्र०—मित्र और अमित्र में क्या भेद है ?

३ प्र०—किस प्रकार के मित्र को छोड़ देने ही से भलाई हो सकती है ?

व्याकरण—और भी बहुत से सर्व नाम हैं जो संज्ञाओं के बदले में आते हैं, उन में कुछ ये हैं,—आप अपना. यह-इस, ये-इन, वह-उस, वे-उन सब-सभी-सबों, कोई-किसी-किन्हीं, जो जौन-जिस-जिन-जिन्हें, सो-तौन-तिस तिन्हें, कौन-किस-किन्हें, क्या इत्यदि।

अभ्यास—ऊपरके पाठ में जितने सर्व्वनाम शब्द हों सब को चुनो ।

गोस्वामी तुलसीदास ।

अनुपम = जिसकी उपमा नहीं हो । पश्चात् = बाद; पीछे ।

महात्मा तुलसीदास बाँदा जिलेके अन्तर्गत राजापुर ग्राम के रहनेवाले थे। ऐसा सुना जाता है कि इनके पिता का नाम आत्माराम द्विवेदी था। ये जाति के ब्राम्हण थे। इनका जन्म संवत् १५८९ में हुआ था । इनके माता पिताने किसी कारणवश उत्पन्न होते ही इन्हें त्याग दिया था । माता-पिता के त्याग देने पर नृसिंहदास नामक एक साधु इन्हें शूकर क्षेत्र में उठा ले गये। बालकपन ही से उस महात्मा ने इन्हें ईश्वर की भक्ति, प्रेम, दया, आदि करना-सिखाया था ।

कुछ दिनों के पश्चात् दीनबन्धु पाठक नामक एक ब्राम्हण गोसाईंजी को सब प्रकार योग्य समझ कर अपनी पुत्री से इनका विवाह कर दिया। अब ये अपनी प्यारी स्त्री यथा गृहस्थी के फन्दे में बेतरह फंस गये, किन्तु कुछकाल बीतनेपर अपनी स्त्री की ही शिक्षा और उपदेश से इनके हृदय का अन्धकार दूर हो गया। इन की स्त्री के अत्यन्त प्रभावशाली उपदेश ने इन के हृदयपर ऐसा प्रभाव डाला कि अबसे उनका समय केवल ईश्वराराधन में व्यतीत होने लगा। ये प्रातःकाल ही उठकर नित्य नैमित्तिक कामोंसे निवृत्त हो कर ईश्वर-भजन में लग जाते थे अन्त में इसी भक्ति एवं ईश्वर-प्रेम से ये अनेकानेक दुस्तर कार्य्यों को भी भली भाँति करने लगे

गये। इनकी बुद्धि भी ईश्वर की अपार दया से ऐसी तीक्ष्ण हो



तुलसीदास।

गयी कि इन्हों ने कई पुस्तकें लिख डालीं।

रामचरित-मानस, तुलसी-सतसई, कवित्त रामायण, गीतावली, विनयपत्रिका, रामसतसई, आदि इन की कीर्त्ति के अजर और अमर फल हैं। आज नगर-नगर देश-देश महल्ला-महल्ला ग्राम-ग्राम गृह-गृह इनकी अनुपम सर्वप्रिय रामायण पायी जाती है. जिसे लोग नित्य पाठ कर नाना प्रकार के उपदेश ग्रहण किया करते हैं। इनकी बुद्धि ऐसी विलक्षण थी कि ये अपने से अच्छे-अच्छे साधुओं को भी अपने शास्त्रार्थ से लज्जित कर देते थे और उन साधुओं को अपनी हार माननी पड़ती थी। इनकी बुद्धि की प्रखरता देखकर एकबार अकबर बादशाह ने भी इनकी परीक्षा ली थी, किन्तु उसमें भी इन्हों ने भली भाँति सफलता प्राप्त की थी।

गोसाईं जी ने प्रायः सभी तीर्थ स्थानों की यात्रा की थी तथा जहाँ-जहाँ ये गये वहाँ-वहाँ के लोगों ने भी इनका उचित रीति से आदर सत्कार किया था। जब ये बृन्दावन गये और वहाँ से लौटे तो रास्ते में नाभाजी ने इनका बड़ा आदर सत्कार किया था। सब कार्य्यों को पूरा कर एवं अपनी अचल कीर्त्ति की पताका फहरा कर गोस्वामीजी ने काशी में संवत् १६८० की श्रावण शुक्ला सप्तमी को यह दोहा पढ़ते-पढ़ते अपना शरीर त्याग दिया था।

दोहा—राम नाम यश बरनिके, भयउ चहत अब मौन।
तुलसी के मुख दीजिये, अबहूं तुलसी सौन॥

गोसाईं जी की मृत्यु के सम्बन्ध में यह दोहा भी बहुत प्रसिद्ध है:—

दोहा—संवत् सोलह सौ असी असी गङ्गके तीर।
श्रावण-शुक्ला-सप्तमी तुलसी तज्यौ शरीर॥

१ प्र०—गोसाईं जी को उनके माता-पिता ने क्यों उत्पन्न होते ही फेंक दिया था?

२ प्र०—गोसाईं जी कहने से किस का बोध होता है?

व्याकरण—"बुद्धिमान लड़का" इसमें "बुद्धिमान" शब्द लड़के का गुण प्रकट करता है इस लिये ऐसे शब्द को जो किसी का गुण प्रकट करता है "विशेषण" कहते हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ में विशेषण शब्दों को चुनो।

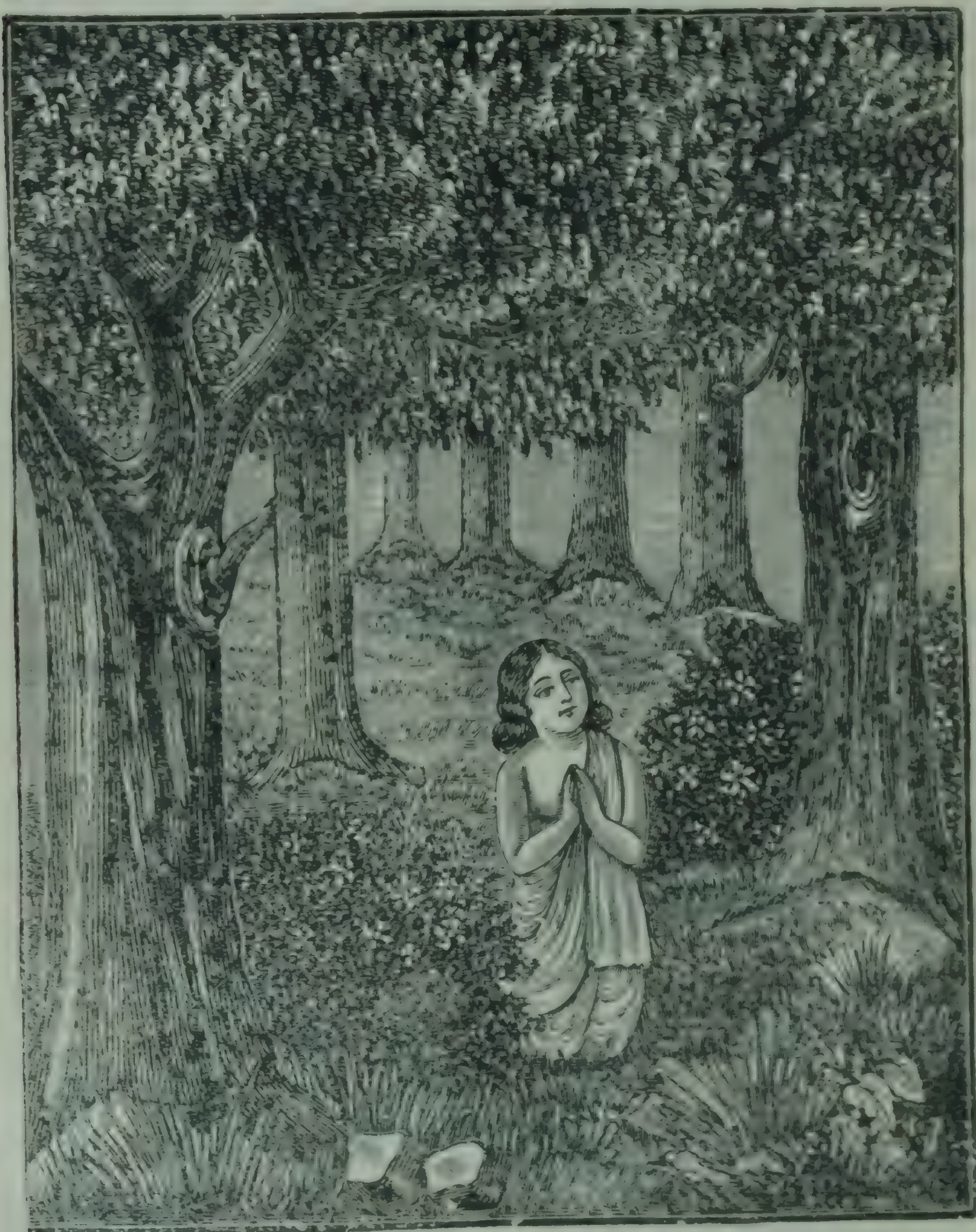
ध्रुव।

उपदेश=सिखावन, शिक्षा। दृष्टि=देखना, नज़र।

राजा उत्तानपाद की रानियाँ सुरुचि और सुनीति थीं। सुरुचि के गर्भ से उत्तम और सुनीति से ध्रुव का जन्म हुआ था। सुरुचि से उत्पन्न हुए पुत्र उत्तम को राजा बहुत प्यार करता—और ध्रुव को उतने प्यार की दृष्टि से नहीं देखता था। इसी कारण ध्रुव बहुत दुःखित रहता था।

एक दिन राजा उत्तानपाद अपनी छोटी रानी के पुत्र उत्तम को गोद में लिये हुए सिंहासन पर बैठा था। उसी समय

ध्रुव भी कहीं से खेलता हुआ आ पहुँचा और चाहा कि मैं भी



ध्रुव।

उत्तम की तरह अपने पिता की गोद में जा बैठूँ। ध्रुव दौड़

कर अपने पिता की गोद में बैठना ही चाहता था कि उत्तम की माता ने उसे गोद में लेकर बैठने से राजा को निषेध कर दिया। सुरुचि की ऐसी रुचि देख कर राजा ने ध्रुव को गोद में नहीं बैठाया।

छोटा सा बालक ध्रुव इस से अपना बहुत बड़ा अपमान समझ कर अपनी माता सुनीति के निकट जा कर रोदन करने लगा। बालक की ऐसी अवस्था देख कर सुनीति ने अपने पुत्र से रोनेका कारण पूछा। बालक से सारी बातें सुन लेने पर वह कुछ देर तक तो चुप रही पर पीछे बोली कि पुत्र इसपर रोने की कोई आवश्यकता नहीं, तुम उत्तम ही को अपने पिता की गोद में बैठने तथा राज-सिंहासन भी उसी को लेने दो। तुम्हारे भाग्य में ये सब बातें नहीं लिखी हुई हैं। तुमने अवश्य पूर्व्व जन्म में कोई बुरा काम किया है जिस से आज तुम्हारा इस प्रकार तिरस्कार किया गया है। पुत्र! तुम कोई ऐसा उपाय करो कि जिससे अत्यन्त ऊँचा पद आपसे आप पाओ। साधु और धर्म्मात्मा बनो। दूसरों की भलाई करो जिससे तुम भी भलाई के भागी हो सको।

ध्रुवने अपनी माता की ऐसी उपदेश भरी बात सुन कर कहा कि माता तुमने जो बात कही हैं वे तीर के समान मेरे हृदय को बेध कर अपना प्रभाव डाल रही हैं। अब मैं अवश्य ही कोई ऐसा यत्न और परिश्रम करूँगा जिससे कोई बड़ा पद मिले और मैं सर्व-प्रिय बन सकूँ। इतनी बात कह कर ध्रुव

अपनी माता को प्रणाम कर घर से ईश्वराराधन के लिये निकल गया। जिस समय पाँच वर्ष का छोटा बालक अपने पिता द्वारा किये गये अपमान को न सह कर नगर से बाहर निकला उस समय सब किसीने उसकी बुद्धि की प्रशंसा की।

जब राजा को इस बात की सूचना मिली तब उसने कई आदमियों को ध्रुव को लौटाने के लिये भेजा; किन्तु ध्रुव अपने वचन का बड़ा ही पक्का और सच्चा था वह बहुत कहने पर भी किसी प्रकार नहीं डिग सका। राजा अपने पुत्र की ऐसी दशा देख कर अत्यन्त शोक करने लगा कि हा! मैंने बड़ा बुरा काम किया जो लोक में अपने सिर पर अपयश का बोझ ले लिया। यदि अब भी ध्रुव आवे तो मैं उसे अपनी गोद में लेकर सिंहासन पर बैठूँ।

जिस समय ध्रुव जा रहा था उस समय मार्ग में उसे नारद ऋषि मिले। उन्होंने कई बातों में ध्रुव की परीक्षा ले उसे ईश्वराराधन करने का मार्ग बताया। अब वह ऋषि के बतलाये हुये उन उपदेशों को मान, एक जङ्गल में जा कर घोर तपस्या करने में लीन हो गया।

इसकी अपार शक्ति और अद्भुत प्रेम देख कर ईश्वरने भी कृपा की। उन्होंने ध्रुव के निकट जा कर कहा कि ऐ बेटा ध्रुव! अपनी आँखें खोल, अब तेरी तपस्या पूरी हो गयी। मैं तेरी भक्ति देख कर तुझ पर अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूं। अब जो तेरी इच्छा हो मुझ से माँग ले।

ध्रुव ने अपने ऊपर ईश्वर की ऐसी अपार कृपा देख कर अपने जन्म को धन्य समझा और आँखों में आँसू भर कर प्रार्थना करने लगा,—"हे प्रभो ! हे दीनबन्धो ! हे सर्व्वप्रिय ! हे अन्तर्य्यामी ! आप की अपार लीला तथा आप के भेदों का पार कौन पा सकता है कि जो आप अपने भक्तों के लिये इतनी अपार दया दिखाया करते हैं।" ईश्वर ने उसकी इसी प्रकार की करुण-वाणी सुन कर उसे वर दिया कि जा तुम अचल लोक का स्वामी हो। तब से ध्रुव की ऐसी ख्याति है कि आज तक उसकी कीर्त्ति गायी जाती है।

प्र०—नारद ने ध्रुव को क्या उपदेश दिया था ?

व्याकरण—विशेषण शब्द जिस संज्ञा शब्द का गुण प्रकट करता है वह विशेष्य कहलाता है। जैसे—'छोटी रानी' इसमें छोटी विशेषण और रानी विशेष्य है।

अभ्यास—ऊपर के पाठ में जितने विशेषण हों उनके विशेष्य बताओ।

दिनों का फेर।

पश्चात्ताप=सोच। अवस्था=उम्र।

विशाखापुर ग्राम में कोई श्यामविहारी नाम का एक व्यक्ति विहारी अति दीन दुखी मनुष्य था। एक चोबदार का काम कर अपने परिवार का पालन किया करता था। जब उसका लड़का गोपाल कुछ बड़ा हुआ तब उसकी इच्छा हुई कि मैं अपने लड़के को किसी प्रकार पढ़ाता तो बड़ा उत्तम होता। पर अति दीन होने के कारण वह कुछ नहीं कर सकता था। उसकी स्त्री भी अन्यान्य लड़कों को पढ़ते हुए देखकर चाहती थी कि यदि कोई मेरे लड़के को अपने यहाँ नौकर रख कर भी पढ़ा देता तो मुझ पर उस की बड़ी कृपा होती। इसी सोच विचार में ये दोनों स्त्री-पुरुष रहा करते थे।

एक दिन गोपाल का पिता अपने मालिक के काम के लिए कहीं बाहर गया। वहीं उसे एक सांप ने काट खाया, जिससे उस बेचारे का प्राण पखेरू उड़ गया। जब यह समाचार उसके घर में पहुँचा, तब उसका लड़का और उसकी स्त्री दोनों ही अति रोदन कर शोक करने लगे।

एक दिन गोपाल ने अपनी माता को उदास देख कर पूछा— "मा ! तुम इतना दुखी क्यों हो ?" बालक की बात सुन कर

उसने कहा "पुत्र मेरे शोक का कारण तुम्हारे अतिरिक्त और कुछ नहीं है। देखो—जब तुम्हारे पिता जीवित थे, तब वे ही तुम्हारे लिखने-पढ़ने की चिन्ता किया करते थे। पर अब उनके नहीं रहने से तुम्हारी सुधि लेनेवाला कोई दूसरा नहीं है। मैं भी अब रोग से विशेष पीड़ित हूँ। यदि मेरा भी प्राण निकल गया तो उस समय तुम्हारी सुधि कौन लेगा? माता-पिता का कर्त्तव्य है कि वे अपने बालकों को सुशिक्षित् बनावें। पर हम लोगों से कुछ नहीं बन पड़ा और हम सब तुम्हारे शत्रु हुए। तुम्हारी अवस्था धीरे धीरे बढ़ती जा रही है।"

माता की ऐसी उपदेशजनक बातें सुन कर गोपाल कुछ सोचने लगा। थोड़ी देर पीछे उसने अपनी मां से कहा "मा! शोक करने की आवश्यकता नहीं। यदि मेरे भाग्य में विद्या लिखी होगी तो मैं अवश्य पढ़ूँगा, अन्यथा हजारों यत्न करने पर भी कुछ नहीं हो सकेगा। मैंने पूर्व जन्म में ऐसा ही कुछ बुरा काम किया होगा कि जिसका यह फल आज मुझे भोगना पड़ रहा है।,,

इसके थोड़े ही दीन पीछे गोपाल की मां भी रोग से पीड़ित हो स्वर्गलोक में चली गयी। अब गोपाल की विपत्ति का ठिकाना नहीं रहा। वह कभी रोता कभी चिल्लाता और कभी मूर्च्छित हो कर भूमि पर गिर पड़ता। इसकी ऐसी अवस्था देख कर इसके पड़ोसियों ने इसे अनेक प्रकार से समझा बुझा

कर इसका दुःख दूर किया और तब उसको एक दुकानदार के यहाँ नौकर रखवा दिया।

दुकानदार ने पहले गोपाल की कई बातों में परीक्षा ली। तत्पश्चात् अपने यहाँ रख कर उसे अपने सम्पूर्ण पदार्थों का रक्षक बना दिया। गोपालने अपने स्वामी का कार्य्य बड़ी ही ईमानदारी के साथ करना आरम्भ किया। थोड़े ही दिनों के पश्चात् अपनी ईमानदारी के कारण वह अपने स्वामी का प्रियपात्र बन गया।

गोपाल प्रातःकाल से नव बजे रात्रि तक अपने स्वामी का ही कार्य्य करता और बीच में जो समय मिल जाता उसी में अपने खाने पीने का प्रबन्ध किया करता था। उसे स्वयम् भोजन बनाना पड़ता था। इतनी कठिनाइयों के रहने पर भी वह अपनी माता की बातों को स्मरण कर कुछ पढ़ा भी करता था।

एक दिन गोपाल के स्वामी ने उसकी बुद्धि की प्रखरता देख कर स्कूल में उसका नाम लिखवा दिया। गोपाल जिस स्कूल में पढ़ता था, उस स्कूल का अध्यापक बड़े ही उदार स्वभावका मनुष्य था। वह इसकी बुद्धि की तीक्ष्णता देख इसे अपने पास से वेतन देने लगा। गोपाल धीरे धीरे अपने परिश्रम तथा नम्र स्वभाव के कारण स्कूल भर के सभी शिक्षकों का प्रियपात्र बन गया। वह थोड़े ही दिनों में अपनी परीक्षा में सफलता प्राप्तकर समाचारपत्रों का अवलोकन करने

लगा। कुछ दिनों के बाद वह अपने गुणों के कारण एक राजा के यहाँ लेखक के काम पर नियुक्त हो गया। गोपाल ने अपने कार्य्य में ऐसी प्रवीणता दिखायी कि राजा के राज्य भर में उसकी प्रसिद्धि हो गयी।

एक दिन राजा ने किसी काम में गोपाल की बुद्धि की परीक्षा ली। उस में गोपाल ने इस युक्ति से उत्तर दिया कि राजा ने उसके उत्तर से अति प्रसन्न हो उसे अपने राज्य का सहायक मन्त्री बना दिया। धीरे-धीरे गोपाल एक बड़ा धनाढ्य व्यक्ति हो गया और उसने अपनी पूर्व्व अवस्था पर विचार कर काम करना आरम्भ किया। गरीबों की यथाशक्ति सहायता करना उसका मुख्य उद्देश्य था। वह समय समय पर विद्वानों की सभा स्थापित कर के गूढ़ बातों का अन्वेषण किया करता था।

१ प्र०—परिश्रम से कौन सा काम नहीं हो सकता है।

२ प्र०—गोपाल के शिक्षक क्यों उस से अति प्रसन्न रहा करते थे ?

अभ्यास – ऊपर के पाठ में जितने विशेष्य और विशेषण हों उन्हें बताओ।

रजिया बेगम।

कर्मचारी=नौकर। सन्तान=लड़केबाले।

मुसलमान बादशाहों में शमसुद्दीन अल्तमश भी एक बड़ा नामी बादशाह हो गया है। उस बादशाह की कई सन्तानों में से रजिया भी एक थी। अल्तमश ने उसे बाल्यावस्था



रजिया बेगम।

ही में तीर भाला चलाना और घोड़े की सवारी करना भली भाँति सिखाया था। अल्तमश अपने सब लड़कों से बढ़ कर रजिया का प्यार करता था।

रजिया की बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। छोटी अवस्था से ही वह विद्या पढ़ने में मन लगाती थी और बड़े प्रेमसे पुस्तक

पढ़ा करती थी वह अपने धर्म्मग्रन्थों को भी स्नेह से पढ़ती और उसके अनुसार कार्य्य करने की चिन्ता किया करतीथी।

अल्तमश ने रजिया की बुद्धि की तेजी देखकर उसे अपने राज्य के कामों से भी परिचित करा दिया था। अल्तमश चाहता भी था कि मेरे मरने के पीछे रजिया ही राज्य की अधिकारिणी बने और अन्त में ऐसा ही हुआ भी।

एकबार अपने पिता 'अल्मश' के कहीं चले जाने पर रजिया ने ही योग्यता पूर्व्वक राज्य किया था। पर उस समय उसका राज कार्य्य करना किसी को अच्छा नहीं लगा था। इसके बाद जब उस बेगम ने फिर अपने इन्हीं गुणों का परिचय देना आरम्भ किया तब तो सब किसी को इसकी बुद्धि की चतुराई पर दंग हो जाना पड़ा। वह बड़ी चालाकऔर बहादुर स्त्रियों में से एक थी जो पहले पहल भारतवर्ष को राजगद्दी पर बैठी थी। जब अल्तमश मर गया तब अपने भाई फिरोजशाहके प्रायः सात महीने राज करनेके पश्चात् रजिया ही राज्य की अधिकारिणी बनी। वह कचहरियों में पुरुषों की पोशाक धारण कर जाया करती और सब कामों को अपने से विचार कर किया करती थी। वह दीन दुखियों की दशा पर विचार करने में तो अग्रगण्य थी। राज्य के सभी कर्म्मचारियों को उसके विचारों को देखकर भौंचक रह जाना पड़ता था।

उस बेगम ने प्रायः साढ़े तीन वर्षों तक राज्य किया। यद्यपि वह सबों में अत्यन्त चालाक थी तथापि अन्त

में उसका भाव कुछ बुरा होगया था। सुना जाता है कि राज्याधिकारिणी होने पर अपने ही एक नौकर से उसने विवाह कर लिया था। इस प्रकार के नीच आचरण के कारण उसे अन्त में कारावास करना पड़ा था और अपनी बुराइयों के कारण वहीं उसे अपने वैरियों के हाथ से मरना पड़ा।

प्र०—रजिया की मृत्यु का कारण बताओ ?

व्याकरण—बहुत से शब्द ऐसे होते हैं,जो किसी कामका करना या होना बताते हैं जैसे,—(१) "राम पढ़ता है ।" इसमें "पढ़ता है" कहने से राम का कोई काम करना समझा जाता है। (२) "पानी बरसता है"। इसमें "बरसता है" कहने से किसी काम का होना जाना जाता है। इसलिये वाक्य में ऐसे काम बतानेवाले शब्दों को "क्रिया" कहते हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ की अन्तिम सात सतर में काम बतानेवाले शब्द को चुनो।

हनुमान जी का लंका में जाना ।

वदन=मुख । मारुतसुत=हनुमान । जलनिधि=समुद्र ।

जात पवनसुत देवन देखा ।
जाना चह बल बुद्धि विशेखा ।।
सुरसा नाम अहिन की माता ।
पठयहु आइ कही तेहि बाता ॥
आज सुरन मोहि दीन्ह अहारा ।
सुनत बचन कह पवन कुमारा ॥
राम काज करि फिरि मैं आवौं ।
सीता कर सुधि प्रभुहिं सुनावौं ॥
तब तव बदन पैठिहौं आई ।
सत्य कहौं मोहि जान दे माई ॥
कवनेहु यतन देइ नहिं जाना ।
ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना ॥
योजन भर तेहि वदन पसारा ।
कपि तनु कीन्ह दुगुन विस्तारा ॥
सोरह योजन मुख तेहि ठयऊ ।
तुरत पवन सुत बत्तिस भयऊ ॥

जस जस सुरसा बदन बढ़ावा।
तासु दुगुन कपि रूप दिखावा॥
शत योजन तेहि आनन कीन्हा।
अति लघु रूप पवन सुत लीन्हा॥
बदन पैठि पुनि बाहर आवा॥
मागि बिदा ताहि सिर नावा॥
मोहि सुरन जेहि लागि पठावा।
बुधि बल मरम तोर मैं पावा॥

दोहा—राम काज सब करिहहु, तुम बल बुद्धि निधान।
आशिष दै सुरसा चली, हरषि चले हनुमान॥

निशिचर एक सिन्धु मंह रहई।
करि माया नभ के खग गहई॥
जीव जन्तु जे गगन उड़ाहीं।
जल बिलोकि तिन की पर छाहीं॥
गहै छाँह सक सों न उड़ाई।
यहि विधि सदा गगन चर खाई॥
सोइ छल हनुमान ते कीन्हा।
तासु कपट कपि तुरतहि चीन्हा॥
ताहि मारि मारुत सुत बीरा।
बारिधि पार गयउ मति धीरा॥
तहाँ जाइ देखी बन शोभा।
गुञ्जत चंचरीक मधु लोभा॥

नाना तरु फल फूल सुहाये।
खग मृग वृन्द देखि मन भाये॥
शैल विशाल देखि इक आगे।
ता पर कूदि चढ़ेउ भय त्यागे॥
उमा न कछु कपि की अधिकाई।
प्रभु प्रताप जो कालहिं खाई॥
गिरि पर चढ़ि लङ्का तेहि देखा।
कहि न जाई अति दुर्ग विशेखी॥
अति उतंग जलनिधि चहुँ पासा।
कनक कोट कर परम प्रकाशा॥

दोहा—पुर रखवारे देखि बहु, कपि मन कीन्ह विचार।
अति लघु रूप धरौं निशि, नगर करौं पैसार॥

मशक समान रूप कपि धरी।
लङ्का चले सुमिरि नरहरी॥
नाम लङ्किनी एक निशाचरी।
सो कह चलेसि मोहि निन्दरी॥
जानेसि नाहिं मरम शठ मोरा।
मोर अहार लङ्क कर चोरा॥
मुष्टिक एक ताहि कपि हनी।
रुधिर बमत धरनीं ढनमनी॥
पुनि सम्भारि उठी सो लङ्का।
जोरि पाणि कर विनय सशंका॥

जब रावणहिं ब्रह्म बर दीन्हा ।
चलत विरंचि कहेउ मोहि चीन्हा ।।
बिकल होसि जब कपि के मारे ।
तब जानेसि निशिचर संहारे ।।
तात मोर अति पुण्य बहूता ।
देखऊं नयन राम कर दूता ।।

दोहा—तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला इक अङ्ग ।
तुलै न ताहिं सकल मिलि, जो सुख तव सत संग ।।

१ प्र०—हनुमानजी ने सुरसा को किस प्रकार हराया ?

२ प्र०—ब्रह्ममा ने लंकिनी से क्या कहा था ?

३ प्र०—सत्संग से क्या समझते हो ?

सिंह ।

सृष्टि=रचना। उपस्थित=हाज़िर ।

ईश्वर की सृष्टि में सिंह भी क्या ही एक विलक्षण और डरावना जन्तु है। इसका नाम लेने मात्र से रोंगटे खड़े हो जाते हैं।



सिंह।

सिंह बहुधा आफ्रिका, अरब, ईरान, और भारतवर्ष गुजरात और राजपूताने आदि देशों में पाया जाता है इसका रंग रेतीली जगहों के सदृश खाकी होता है। इसके

सिर पर काले बालों का गुच्छा रहता है किन्तु सिंहनी को यह नहीं होता ।

सिंह की शक्ति इतनी अधिक होती है कि वह अपने से बड़े-बड़े भयङ्कर जीवों को भी सहज में ही मार सकता है। यह जिस जङ्गल में रहता है यदि वहाँ एक बार भी दहाड़ता है, तो वहाँ के अन्यान्य जीव डर के मारे थर्रा उठते हैं। इसकी गर्जन आकाश के मेघ की गर्ज के सामान होता है। सिंह जब कभी कभी मिलकर जङ्गल में गर्जते हैं तो उस समय एक अत्यन्त डरावना दृश्य आँखों के सामने उपस्थित हो जाता है।

यह अपना शिकार बड़ी सावधानी से करता है। चलने के समय इसके पैरों से शब्द नहीं होता तथा इसे दौड़ने की शक्ति भी अधिक होती है। यह अपना शिकार छिपकर पकड़ता है। विशेष कर यह ऐसा काम जलाशयों के निकट किया करता है। सिंह भारी से भारी जन्तुओं का आखेट भी अकेले कर सकता है किन्तु ऐसा काम कभी-कभी कई सिंह मिलकर किया करते हैं ।

सिंह बहुधा अपना अहेर रात्रि के समय ही किया करता है। यह अपना अहेर योंहीं नहीं करता फिरता; किन्तु जब इसे खूब भूख लगती है, तभी भयङ्कर रूप से यह अपने शिकार पर आक्रमण करता है। यह शिकार करने के पूर्व्व जन्तुओंको नहीं दिखायी पड़ता वरन् एकाएक उनपर धावा बोल देता है ।

१ प्र०--सिंह और सिंहनी में क्या भेद है ?

२ प्र०—हिंसक जन्तुओंका विश्वास करना क्यों निषेध किया गया है ?

व्याकरण—ऊपरके पाठ में जितने काम बतानेवाले शब्द हों, उन्हें बताओ।

शङ्कराचार्य्य ।

अनुमति—राय। अवस्था=दशा, उम्र। मार्ग=रास्ता।

संवत् ८४५ विक्रमीय में श्रीशङ्कराचार्य्य का जन्म मालावार देश के खुशाली नामक ग्राम में हुआ था। इन के पिता का नाम विश्वजित और सौभाग्यवती माता का नाम विशिष्टा था। जब इन की अवस्था ८ वर्ष की हुई तब इनका उपनयन किया गया। कुछ दिनों के अनन्तर इनके पिता का देहान्त हो गया। तब ये अपनी माता के अधीन रहने लगे।

इन की बुद्धि ऐसी तीक्ष्ण थी कि ये थोड़े ही दिनों में वेद शास्त्र इत्यादि इस प्रकार पढ़ने लग गये थे, जिसे देख कर सब किसी को विस्मित होना पड़ता था, इन सब शुभ लक्षणों को देख कर इन की विधवा माता मन ही मन आनन्दित होती थीं। इनका रूप देखने ही से ऐसा ज्ञात होता था कि "ये साधारण मनुष्य नहीं हैं।" इन्होंने एक गुरुकुल में विद्याप्राप्त की थी। इनकी मोहिनी मूर्त्ति देखकर इनकी माता इन्हें एक

क्षण के लिये भी विलग रहना नहीं चाहती थीं। किन्तु इनको सुयोग्य बनाना भी उनका परम धर्म्म था। इसी कारण लड़कपन में ही ये गुरुकुल में विद्या प्राप्तिहेतु ब्रह्मचारी बनाकर भेज दिये गये। इनके गुरुका नाम गोविन्दाचार्य्य था। ये अपने परिश्रम और बुद्धि की तीक्ष्णता के कारण अपने गुरु के प्रियपात्र बन गये। कुछ दिनों तक इन्होंने वहाँ विद्या प्राप्त की।

यद्यपि ये सभी कामों में प्रवीण थे तथापि संन्यास-व्रत धारण करना इनका मुख्य उद्देश्य था। पर अपनी माता की पूर्ण अनुमति नहीं मिलने के कारण ये कुछ नहीं कर सकते थे। ये भिक्षाटन कर अपनी कार्य्य-सिद्धि किया करते थे।

एक दिन जब वे बाहर भिक्षा माँगने के लिये किसी गृहिणी के पास गये तब वह इन्हें देख कर बहुत लज्जित हुई क्योंकि वह स्वयं एक दीन भिखारिणी थी तौभी एक फल अनायास मिल जाने से उसने इन्हें दे दिया। उसकी ऐसी दशा देख ये विशेष दुःखित हुए और उसी समय से इनके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ।

कुछ काल विद्याध्ययन करने पीछे ये अपनी माता के निकट गये और बहुत दिनों तक उनकी आज्ञाओं को मान उन्हें सब प्रकार से सुख देते रहे। किन्तु इनके हृदय से सन्यासी बनने का विचार अभी गया नहीं था। ये नित्य सोचा करते थे कि किस प्रकार सत्य धर्म्म का प्रचार हो उस समय बौद्ध धर्म्म का प्रचार जोरों पर था। उसे रोकने

के लिये इन्होंने बड़ी चेष्टा की थी। इन्हीं सब कारणों से इनका नाम सारे संसार में विख्यात हो गया था।

एकबार जब इनकी माता किसी कार्य्यवश कहीं जा रही थीं उसी समय ये भी उनके साथ हो लिये थे कुछ ही दूर जानेके बाद मार्ग में एक गहरी नदी मिली। उसे पार करते समय इन्होंने अपनी माता से प्रार्थना की कि कृपा कर आप मुझे संन्यास-व्रत धारण करने के लिए आज्ञा दो, नहीं तो मैं इसी पानी में डूब मरूंगा। कुसमय में पुत्रकी ऐसी बात सुन कर उन्हों ने विवश ही उन्हें संन्यास लेने की आज्ञा दे डाली।

संन्यासी होने के पश्चात् इन्हों ने कई जगहों में परिभ्रमण किया और अनेक आचार्य्यों को अपने विद्या-बल और बुद्धि से परास्त किया। इन्हों ने कई पुस्तकों की रचना की है। जिन में शङ्करविजयविलास, शङ्करजय आदि मुख्य है। इन्हों ने अपने जीवन को परोपकार और सत्यप्रचार में व्यतीत किया। इनके धर्म्मानुयायी कई शिष्य भी बड़े प्रसिद्ध हो गये हैं। इन्हें किसी वस्तु का लोभ नहीं था और न किसी की वस्तु लेते थे। इन्हीं के समान महात्माओं का जन्म धन्य है जिनकी कीर्त्ति आज तक सारे विश्व में प्रकाशित है।

१ प्र०—शंकराचार्य्य की शिक्षा किस प्रकार हुई ?

२ प्र०—इनके जीवन का उद्देश्य क्या था ?

व्याकरण—उठना बैठना और चलना इत्यादि ऐसे शब्द हैं जिनके अन्त में ना है। इन से कोई काम समझा जाता है इस लिये ऐसे शब्द को

क्रिया का साधारण रूप या धातु कहते हैं किसी शब्द के अन्त में ना होते हुए भी उससे कोई काम नहीं समझा जाता हो तो वह धतु नहीं कहलाता। जैसे,—सोना, कोना, सलोना, इत्यादि।

क्रिया के साधारण रूपसे ही उसके अनेकों रूप बनते हैं। जैसे,— 'पढ़ना' एक क्रिया का साधारण रूप है। इस से पढ़ता, पढ़ता है, पढ़ता था, पढ़ता होगा, पढ़ा, पढ़ा है, पढ़ा था, पढ़ा होगा, इत्यादि अनेकों रूप बनते हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ में जितनी क्रियायें हों, सबका साधारण रूप बताओ।

नारायणदास और उसका पुत्र।

नीतिज्ञ = नीतिजाननेवाला। विष = जहर। प्रशंसा = बड़ाई।

विदर्भदेश में सुदर्शनचक्र नामक एक राजा रहता था। उसके राज्य में नारायणदास नामक एक धीवर रहता था जो एक जहाज में माँझी का काम किया करता था। उसे एक स्त्री और यमुनादास नामक एक पुत्र था। वह बालक लड़कपन ही से अपने पिता की बात भली भाँति मानता और उन की आज्ञाओं के अनुसार चलता था।

नारायणदास का नित्य का यह काम था वह समुद्र में जा कर अपना काम किया करता था और दिन भर काम करने

से जो कुछ मिल जाता उसी से सन्तोषपूर्व्वक अपना और अपने कुटुम्बियोंका पालन पोषण किया करता था।

एक दिन यह अपने नित्य के नियमानुसार समुद्र में जहाज़ पर काम कर रहा था कि एकाएक वायु का वेग ऐसा आया कि जहाज़ डगमाने लगा और थोड़ी ही देर के अनन्तर वह जहाज़ डूब जाने पर हो गया। सब लोग त्राहि त्राहि कर ईश्वरकी पुकार मचाने लगे। उस समय नारायणदास ने अपने साथियों की सहायता से इस प्रकार जीव पर खेलकर काम किया कि जहाज डूबने से बच गया आर सब किसी के जी में जी आया।

नारायणदासके इस प्रकार की युक्ति का काम और उसकी बहादुरी देख कर उस जहाज़ का कप्तान अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसे कुछ पुरस्कार भी दिया। किन्तु जल के भीतर आने जानेके कारण किसी विषधर जन्तु ने नारायणदासके पैरों को काट खाया था, जिस से लगातार खून की धारा बहने लगी थी। इस की ऐसी अवस्था देख कर सब लोग बहुत शोक करने लगे। किन्तु नारायदास उस जहाज़ में तब तक काम करता ही रह गया जब तक कि वह जहाज़ किसी सुरक्षित स्थान में न जा लगा।

कुछ समय पीछे जब वह जहाज़ किसी सुरक्षित स्थान में जा लगा तब नारायणदास अपने स्वामी से आज्ञा ले कर अपने घर पर आया। उसकी ऐसी अवस्था देखकर उसके परिवारके सब लोग सोच करने लगे। किन्तु नारायणदास धैर्य्यवान

व्यक्ति था उसने सब किसी को धैर्य्य दे शीघ्र ही अपने रोग की औषधि करने के लिये उसने कहा।

सब किसी ने अपनी विद्या बुद्धि भर उस की औषधि की, किन्तु किसी की औषधि ने कुछ काम नहीं किया; वरं घटने की अपेक्षा उसका रोग धीरे-धीरे बढ़ने लगा। नारायणदास अपने रोगकी पीड़ा से बचैन हो कभी कभी मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़ता था ; इसकी ऐसी दशा देख कर सब लोग विशष चिन्तित हो गये थे। अन्त में नारायण-दास रोग की वेदना से इतना दुखी हुआ कि उसका शरीर छूटने पर हो गया।

एक दिन उसकी स्त्री और उसका लड़का दोनों उसकी अवस्था पर विचार कर रुदन कर रहे थे कि उसी समय वहाँ एक फ़कीर आ पहुँचा और उसने उसके रोग को भली-भाँति देख कर कहा कि यह आदमी तभी निरोग होगा जब कोई इसके घाव के विष को चूस ले, किन्तु चूसनेवाला मनुष्य शीघ्र ही मर जायगा और यदि यह कार्य्य शीघ्र नहीं किया तो इसके मरने में अब विलम्ब नहीं है।

इस दैव-वाणी को सुन कर सब लोग भौचकसे हो रहे किन्तु किसी का भी ऐसा साहस नहीं हुआ जो यह कठिन काम कर सके।

इन सब बातों को वह छोटा सा बालक यमुनादास वहीं पर सुन रहा था और जब इस के पिता की मूर्च्छा छूटी तब

उसने उस से फ़क़ीर के आने और उसकी औषधि बताने का कुल ब्यौरा कह सुनाया और उसने अपने पिता से यह भी प्रार्थना की कि यदि कृपा कर आप मुझे आज्ञा दें तो मैं आपको इस भयङ्कर और प्राणनाशक रोग से बचाऊँ। पर उसके पिताने अपने पुत्र को इस काम के करने से रोका और कहा कि पुत्र ! मैं भले ही मर जाऊँ पर तुम्हारा मरना किसी प्रकार मेरे जीवन का कारण नहीं हो सकेगा।

एक समय जब उसका पिता सो गया तब उसने धीरे से उसके पैरों को उठा कर घावका सारा विष चूस लिया। बस चूसना था कि उसका प्राणान्त हो गया। बालक यमुना-दास मुर्दा हो कर भूमि पर गिर पड़ा। जब नारायणदास की निद्रा टूटी और उसकी बीमारी जाती रही, तब उसने अपने लड़के को देखा कि मेरा पुत्र मृतक हो कर भूमि पर पड़ा है। उसने तुरन्त जान लिया कि मेरे पुत्र ने मेरे ही हेतु अपने प्रिय प्राणों को न्योछावर किया है। इस कार्य्य को देख कर-उसने भी अपने पुत्र के शोक से हा पुत्र! पुत्र! कह कर अपना प्राण त्याग कर दिया।

जब यह समाचार ग्राम में चारों ओर फैला तब सब लोग उस स्थान में आ आ कर उस लड़के का मृतक शरीर देख देख उसकी पितृभक्ति की प्रशंसा करने लगे। उसके चेहरे को देखने मात्र से पिता की भक्ति की झलक आती थी।

१ प्र०—लड़के ने क्यों अपना प्राण दे दिया ?

२ प्र०—ऊपरकी कहानी पढ़ने से तुम्हें क्या उपदेश मिलता है ?

व्याकरण ऊपरके पाठ में जितनी क्रियायें हैं, वे किस किस्म का काम बताती हैं ?

महाराज पञ्चमजौर्ज।

शोकानन्द=शोक और खुशी। राज्याभिषेक=राजतिलक।



यह चित्र हमारे वर्त्तमान महाराजाधिराज पञ्चम जौर्ज का है। इनका जन्म ३ जून सन् १८६५ ईस्वी को हुआ था।

इनके पिता का नाम सप्तम एडवर्ड और माता का नाम आलेकजेण्ड्रा है।

महाराज बाल्यावस्था से जहाज़ सम्बन्धी कार्य्य किया करते थे। इनकी बुद्धि तथा धारणा शक्ति बड़ी प्रबल थी। ये लड़कपन में जिस काम के करने में हाथ डालते उसे कर ही डालते थे। इन्हें घोड़े की सवारी अत्यन्त प्रिय जान पड़ती थी। जब कभी कहीं घुड़दौड़ इत्यादि होती तो ये वहाँ पर अवश्य जाया करते थे। महाराज का शुभ विवाह ६ ठीं जुलाई सन् १८९३ ईस्वी को हमारी वर्त्तमान महारानी मेरी के साथ हुआ था।

जब इनके पिता सप्तम एडवर्ड ६ मई सन् १९१० ईस्वी को स्वर्गवासी हुए; तब ये ही उन की गद्दी पर विराजमान हुए। इङ्गलैण्ड में राज्याभिषेक हो जाने के पश्चात् ये दिल्ली में भी बड़ी तैयारी के साथ पधारे थे। वहीं पर सन् १९११ ई० की १२ वीं दिसम्बर को बड़ी धूमधाम से इनका राज्याभिषेक किया गया था। जिस समय भारत की प्राचीन राजधानी हस्तिनापुर में आपने अपने कमल चरण रक्खे थे उस समय वहाँ का भाग्य चमक रहा था। केवल वहीं के नहीं; वरन् सारे भारतवर्ष के भाग्य पर शुभ कामनासूचक चिन्ह दिखायी पड़ रहे थे। महाराज का आना सुन कर ग्राम-ग्राम; नगर-नगर, स्थान स्थान में जय-जयकार की ध्वनि सुनायी पड़ रही थी। सारी प्रजा आनन्द के समुद्र में गोते लगा रही थी। बड़े

बड़े राजा महाराजा भी आपके स्वागत के लिये दिल्ली में पधारे थे।

महाराज का स्वभाव अत्यन्त ही सरल और नम्र दिखायी पड़ता था। इनके रूप के अवलोकन मात्र से प्रजा की भलाई का चिन्ह प्रगट हो रहा था। साथ में महारानी की ओर ध्यान करने से एक और ही अनुपम शान्त मूर्त्ति के ध्यान का फल मिल रहा था। हमारी वर्त्तमान महारानी मेरी कुछ साधारण पढ़ी लिखी नहीं है। वरन् ये कई भाषाओं की ज्ञाता है।

महाराज पञ्चम जौर्ज की तुलना किसी अन्य राज्य से नहीं की जा सकती है। इनके राज्य में कभी किसी को किसी शत्रु का भय नहीं है। यदि हम लोगों के कभी कोई शत्रु होते भी हैं और उनसे किसी बात का डर भी होता है तो हर समय सेनाएँ तैयार रहती हैं जिन से शत्रुओं का मान मर्दन कर दिया जाता है। इनके राज्य में कभी सूर्य्यास्त नहीं होता। बाघ और बकरी एक ही घाट पर अपना बैर त्याग कर पानी पी रही हैं। चारों ओर आनन्द ही आनन्द दिखायी पड़ता है। पथिकों के आराम के लिये स्थान-स्थान पर प्रबन्ध किये गये हैं चोरी डाका इत्यादि का अब जरा भी भय नहीं है।

महाराज का ध्यान शिक्षा की ओर बहुत अधिक है। इसी कारण इन्होंने भारत पधारने पर पचास लाख रुपये दे शिक्षा के अभाव को बहुत कुछ दूर किया है! इन्हीं के प्रबन्ध से

स्थान-स्थान पर पाठशालायें और स्कूल इत्यादि स्थापित हैं। यद्यपि ये हम लोगों से बहुत दूर रहते हैं तथापि बैठे-बैठे हम दीन प्रजाओं की सुधि लिया करते हैं तथा हमारे दुःखों के दूर करने का उपाय करते रहते हैं। ईश्वर से हमारी यही प्रार्थना है कि वे वर्त्तमान महाराजा और महारानी को चिरंजीवी करें।

प्र०—महाराजा ने हमारे सुख के लिये कौन कौन से प्रबन्ध कर रखे हैं ?

व्याकरण—"लड़का धीरे धीरे लिखता है" "घोड़ा तेज दौड़ता है" इन वाक्यों में "धीरे-धीरे" लिखने का और "तेज" दौड़ने का गुण प्रगट करता है। इस लिये इस तरह क्रिया के गुण बतानेवाले शब्दों को क्रिया-विशेषण कहते हैं।

अभ्यास—(१) इन में क्रिया बताओ :—

राम अच्छा लिखता है। वह झट सो गया। वह तड़के उठता है। तुम कहां गया था ? वह कितना खाता है ? तुम कब आया ? (२) ऊपरके पाठ में जितने क्रिया-विशेषण हों उन्हें चुनो।

वृन्द के दोहे।

सरवर = तालाब। भेषज = दवा। सौर = चादर।

जाही ते कछु पाइये, करिये ताकी आस।
रीते रसवर पर गये, कैसे बुझत पियास ॥ १ ॥
नीकी हूं फीकी लगै, बिन अवसर की बात।
जसे बरनत युद्धमें, नहिं सिंगार सुहात ॥ २ ॥
विद्या धन उद्यम बिना, कहो जु पावै कौन।
बिना डुलाये ना मिले, ज्यों पंखा को पौन ॥ ३ ॥
रहे समीप बड़ेन के, होत बड़ो हित मेल।
सब ही जानत बढ़त है, वृक्ष बराबर वेल ॥ ४ ॥
अपने पहुँच बिचारि के, करतब करिये दौर।
ते ते पाँव पसारिये, जेती लम्बी सौर ॥ ५ ॥
बुरे लगत सिख के बचन, हिये विचारो आप।
कड़वी भेषज बिन पिये, मिटे न तन की ताप ॥ ६ ॥
मधुर बचन ते जात मिटि, उत्तम जन अभिमान।
तनक सीत जल सों मिटै, जैसे दूध उफान ॥ ७ ॥

प्र०—अन्तिम दोहे का अर्थ बताओ ?

प्र०—शिक्षा को बातें क्यों बुरी लगती हैं ?

व्याकरण—इन में कौन कौन शब्द क्रिया-विशेषण हैं:—तुम कब जाओगे ? वह मेरे पास ही बैठा था। मोहन वहां गया था ? वह बहुत खाता है। वह शीघ्र चला गया।

Hindi—Sahitya Bal-manoranjan Part I for Class IV, Price 4 Annas.